सत्य की खोज

मौलाना वहीदुद्दीन ख़ाँ

सत्य की खोज

यह विश्व एक बहुत बड़ी किताब की तरह हमारे सामने फैला हुआ है, पर यह एक ऐसी अनोखी किताब है, जिसके किसी पन्ने पर इसके विषय और इसके लेखक का नाम लिखित नहीं, यद्यपि इस किताब का एक-एक शब्द बोल रहा है कि इसका विषय क्या हो सकता है और इसका लेखक कौन है।

जब कोई व्यक्ति आंख खोलता है और देखता है कि वह एक विशाल और व्यापक विश्व के बीच खड़ा है तो सहज ही उसके ज़ेहन में सवाल उठता है कि "मैं क्या हूं, कौन हूं और यह संसार क्या है ?" वह अपने आपको और विश्व को समझने के लिए बेचैन होता है, अपने स्वभाव में समाये हुए संकेतों को पढ़ने की कोशिश करता है, दुनिया में जिन परिस्थितियों का उसे सामना करना पड़ता है, वह चाहता है कि उनके वास्तविक कारणों को जाने। उसके ज़ेहन में अनगिनत सवाल उठते हैं, जिनका जवाब मालूम करने के लिए वह बेचैन रहता है, पर वह नहीं जानता कि उनका जवाब क्या है।

ये सवाल महज़ दार्शनिक क़िस्म के सवाल नहीं हैं, बल्कि ये आदमी के स्वभाव, उसके निजत्व, उसकी फ़ितरत और उसके हालात का सहज नतीजा है। ये ऐसे सवाल हैं, जिनसे दुनिया में लगभग हर व्यक्ति को एक बार गुज़रना होता है। इनका जवाब न मिलने की स्थिति में कोई पागल हो जाता है, कोई आत्महत्या कर लेता है, किसी की सारी ज़िंदगी बेचैनियों में गुज़र जाती है और कोई अपने 'असली' सवाल का जवाब न पाकर दुनिया की दिलचस्पियों में खो जाता है और चाहता है कि उनमें खोकर इस मानसिक परेशानी से छुटकारा पा ले। वह जो कुछ पा सकता है, उसको पाने की कोशिश में उसको भुला देता है, जिसको वह पा न सका।

इस सवाल को हम दो शब्दों में 'सत्य की खोज' कह सकते हैं, लेकिन अगर इसका हम विश्लेषण करें तो ये बहुत से सवालों का समूह मालूम होगा। ये सवाल क्या हैं? ये सवाल अलग-अलग ढंग से कहे जा सकते हैं, पर सुविधा के लिए मैं इनको निम्नलिखित तीन शीर्षकों में बांटना चाहूंगा—

1. स्रष्टा की तलाश
2. उपास्य (माबूद) की तलाश
3. अपने परिणाम की तलाश

मेरी दृष्टि में 'सत्य की खोज' दरअसल नाम है इन्हीं तीनों सवालों के जवाब पाने

का। चाहे जिन शब्दों में आप इन सवालों को व्यक्त करें, पर वास्तव में वह इन्हीं का बदला हुआ रूप होगा और इन्हीं तीन शीर्षकों में इन्हें एकत्र किया जा सकेगा।

प्रकट रूप से ये सवाल ऐसे हैं, जिनके बारे में हम कुछ नहीं जानते और न किसी पहाड़ की चोटी पर ऐसा कोई बोर्ड लगा हुआ दिखाई देता है, जहां इनका जवाब लिख कर रख दिया गया हो। पर वास्तविकता यह है कि जो सवाल है उसी के अंदर उसका जवाब मौजूद है। विश्व अपनी वास्तविकता की तरफ़ स्वयं इशारा करता है, हालांकि वह हमको निश्चित ज्ञान तक नहीं ले जाता, लेकिन यह इशारा इतना साफ़ और स्पष्ट है कि अगर हमें किसी तरह वास्तविकता का ज्ञान हो जाए तो हमारा ज़ेहन पुकार उठता है कि निश्चय ही यही सच है, इसके सिवा विश्व की कोई और वास्तविकता नहीं हो सकती।

स्रष्टा की तलाश

सृष्टा को देखते ही सबसे पहला सवाल यह उभरता है कि इसका बनाने वाला कौन है और वह कौन है जो इस महान कारख़ाने को चला रहा है। पुराने ज़माने में लोग यह समझते थे कि बहुत-सी अनदेखी ताक़तें इस कारख़ाने की मालिक हैं। एक बड़े ईश्वर की निगरानी में बहुत-से छोटे-छोटे ईश्वर इसका इंतज़ाम कर रहे हैं। अब भी बहुत से लोग इसी तरह की विचारधारा रखते हैं। पर तर्क और सिद्धांत की दुनिया अब इस नज़रिये को नहीं मानती। आज यह एक मुर्दा दृष्टिकोण है न कि ज़िंदा।

आज जो लोग अपने को प्रगतिशील कहते हैं और अपने को नए दौर का आदमी मानते हैं, वे 'शिर्क' यानी 'अनेक ईश्वरों की साझेदारी' के विचार के बजाए नास्तिकता और संयोग के सिद्धांत के क़ायल हैं। उनका विचार है कि यह विश्व किसी विवेकशील और जाग्रत हस्ती की रचना नहीं है, बल्कि इत्तिफ़ाक़ी हादसे का नतीजा है। उनका मानना है कि जब कोई घटना संयोग से घट जाती है तो उसके कारण कुछ और प्रतिघटनाएं अस्तित्व में आती हैं। इस तरह कारण और कार्य का एक लंबा सिलसिला चल पड़ता है। और यही सिलसिला वह कारण है, जो संपूर्ण विश्व को चला रहा है। इस विचारधारा में दो बुनियादी चीज़ें हैं— एक 'संयोग' और दूसरी कार्य-कारण का नियम (Law of Causation)।

यह विचारधारा कहती है कि अब से लगभग दो लाख अरब साल (२० नील साल) पहले इस विश्व या सृष्टि का अस्तित्व न था। उस समय न तो सितारे थे और न नक्षत्र! पर वातावरण में पदार्थ मौजूद था। यह पदार्थ उस समय जमी हुई ठोस हालत में न था। उसका रूप इतना जटिल न था, बल्कि वह अपनी सरल और प्रारंभिक शक्ल में था—यानी यह पदार्थ निपट इलेक्ट्रोनों और प्रोटोनों की शक्ल में पूरे आसमान या पूरे वातावरण में समान रूप से फैला हुआ था।

दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि यह पूरी सृष्टि, यह तमाम कायनात बहुत छोटे-छोटे कणों या सूक्ष्म परमाणुओं के ग़ुबार से भरी हुई थी। उस समय पदार्थ बिल्कुल संतुलन की हालत में था। उसमें किसी तरह की हरकत, किसी तरह की गति न थी।

गणित की दृष्टि से यह संतुलन ऐसा था कि अगर उसमें कोई ज़रा-सी भी हलचल पैदा कर दे तो फिर यह क़ायम नहीं रह सकता, यह हलचल बढ़ती ही चली जाएगी। अगर उस पहली हलचल को मान लीजिए तो इस विचारधारा के अनुसार इसके बाद की तमाम घटनाएं गणित के अनुसार साबित हो जाती हैं।

तो पहले-पहल ऐसा हुआ कि पदार्थ के इस बादल में हल्की-सी हलचल पैदा हुई, जैसे किसी हौज़ के पानी को कोई हाथ डाल कर हिला दे। विश्व की इस शांत और पुरसुकून दुनिया में यह हलचल, यह गति किसने पैदा की, इसके बारे में कुछ नहीं मालूम। लेकिन हलचल हुई और यह हलचल बढ़ती चली गई। हलचलों का एक सिलसिला चल पड़ा। नतीजा यह हुआ कि पदार्थ सिमट-सिमट कर अलग-अलग जगहों में जमा होना शुरू हो गया। यही वह एकत्रित हुआ पदार्थ है, जिसको हम सितारा, ग्रह और नक्षत्र कहते हैं।

सृष्टि की यह व्याख्या विज्ञान की तरफ़ से पेश की गई थी, पर सच्चाई यह है कि यह तर्क इतना बौना और कमज़ोर है कि ख़ुद वैज्ञानिकों का मन भी इस पर जम न सका। यह विचारधारा इस वास्तविकता को स्वीकार करती है कि उसे नहीं मालूम कि विश्व को पहली बार किसने हरकत दी, लेकिन इसके बावजूद इस विचारधारा को पेश करने वालों का दावा है कि उन्होंने सृष्टि के सबसे पहले हरकत देनेवाले के बारे में जानकारी हासिल कर ली है। उनके अनुसार इस पहली हरकत को जन्म देनेवाले का नाम इत्तिफ़ाक़ (संयोग) है।

सवाल यह है कि जब विश्व में सिर्फ बेहरकत और गतिहीन पदार्थ था, उसके सिवा कोई चीज़ मौजूद न थी तो यह अजीबोग़रीब इत्तिफ़ाक़ कहां से आ गया, जिसने पूरी सृष्टि को गति दे दी। जिस घटना का कारण न तो पदार्थ में मौजूद था और न पदार्थ के बाहर, फिर यह घटना घटी तो कैसे?

इस विचारधारा का यह एक निहायत दिलचस्प विरोधाभास है कि यह हर घटना से पहले एक घटना का, हर प्रतिक्रिया से पहले एक क्रिया का होना ज़रूरी मानती है, जो बाद में घटित होने वाली या जारी रहने वाली घटनाओं का कारण बन सके, पर इस विचारधारा की शुरुआत एक ऐसी घटना से होती है, जिससे पहले उसका कारण मौजूद नहीं। यही वह बेबुनियाद सोच है, जिसकी बुनियाद पर विश्व के इत्तिफ़ाक़ी जन्म के सिद्धांत की इमारत खड़ी कर दी गई है।

फिर यह विश्व महज़ इत्तिफ़ाक़ से बन गया तो क्या घटनाएं आवश्यक रूप से वही रुख़ इख़्तियार करने पर मजबूर थीं, जो उन्होंने इख़्तियार कीं? क्या इसके सिवा कुछ और नहीं हो सकता था? क्या ऐसा संभव नहीं था कि सितारे आपस में टकरा कर तबाह हो जाते? पदार्थ में हरकत पैदा होने के बाद क्या यह ज़रूरी था कि यह महज़ हरकत न रहे, बल्कि एक विकासशील हरकत बन जाए और एक हैरतअंगेज़ सिलसिला चल पड़े और ये तमाम सिलसिला मौजूदा विश्व को अस्तित्व में लाने के लिए दौड़ना शुरू कर दे?

आख़िर वह कौन-सी लॉजिक, कौन-सा तर्क था, जिसने सितारों के बनते ही उनको अथाह आसमान में बाक़ायदा, सही ढंग से फिराना शुरू कर दिया। फिर वह

कौन-सी लॉजिक थी, जिसने सृष्टि के एक उपयुक्त स्थान पर सौर-मंडल को बनाया और जमाया। फिर वह कौन-सा तर्क था, जिससे हमारी पृथ्वी पर वे तमाम अजीबोग़रीब परिवर्तन हुए, जिनसे यहां ज़िंदगी का होना संभव हो सका और जिन परिवर्तनों का आज तक सृष्टि की बेशुमार दुनियाओं में से किसी एक दुनिया में भी पता नहीं चल सका ? फिर वह कौन-सा तर्क था जो एक ख़ास अवस्था में पहुंच कर बेजान पदार्थ से जानदार प्राणियों के जन्म का कारण बन गया ? क्या इस बात की कोई न्यायसंगत व्याख्या की जा सकती है कि धरती पर ज़िंदगी किस तरह और क्यों अस्तित्व में आई और किस नियम के तहत लगातार पैदा होती-चली जा रही है ?

फिर वह कौन-सी लॉजिक थी, जिसने विश्व के एक छोटे से हिस्से में हैरत-अंगेज़ तौर पर वे तमाम चीज़ें पैदा कर दीं, जो हमारे जीवन और हमारे विकास और हमारी सभ्यता के लिए ज़रूरी थीं। फिर वह कौन-सी लॉजिक है जो इन हालात को हमारे लिए बाकी रखे हुए है। क्या महज़ एक इत्तिफ़ाक़ का हो जाना इस बात का पर्याप्त कारण था कि ये सारी घटनाएं इतने खूबसूरत ढंग से और ठीक-ठीक क्रम के साथ लगातार घटती चली जाएं और अरबों और खरबों साल तक उनका सिलसिला जारी रहे और फिर भी उनमें कोई फ़र्क़ न आने पाए ?

क्या इस बात की सचमुच कोई व्याख्या की जा सकती है कि महज़ इत्तिफ़ाक़ से घटने वाली घटनाओं में तालमेल की ख़ूबी कहां से आ गई और इतने अजीबोग़रीब ढंग से लगातार विकास करने का रुझान उसमें कहां से पैदा हो गया ?

यह इस सवाल का जवाब था कि यह विश्व कैसे पैदा हुआ ? इसके बाद यह सवाल उठा कि इसका चलाने वाला कौन है ? वह कौन है, जो इस महान और विशालतम कारख़ाने को इतने व्यवस्थित ढंग से गति दे रहा है। इस व्याख्या में जिसको विश्व का स्रष्टा कहा गया है, उसी को विश्व का हाकिम या संचालक नहीं कहा जा सकता। यह व्याख्या इस ढंग की है कि दो ईश्वरों के बिना इसका काम नहीं चलता ; क्योंकि पहले-पहल हुई हरकत या गति को तो इत्तिफ़ाक़ का नाम दिया जा सकता है, लेकिन इसके बाद की लगातार हरकत को किसी भी हालत में इत्तिफ़ाक़ या संयोग नहीं कहा जा सकता। इसकी व्याख्या के लिऐ दूसरा ईश्वर तलाश करना पड़ेगा।

इस कठिनाई को हल करने के लिए कार्य-कारण का सिद्धांत (Principle of Causation) पेश किया गया, जिसका अर्थ यह है कि पहली हरकत के बाद विश्व में कारण और कार्य का एक ऐसा सिलसिला चल पड़ा है कि एक के बाद एक तमाम घटनाएँ घटती चली जा रही हैं; बिल्कुल उसी तरह जैसे बच्चे बहुत-सी ईंटें खड़ी करके किनारे की एक ईंट गिरा देते हैं तो उसके बाद की तमाम ईंटें स्वयं गिरती चली जाती हैं। जो घटना घटती है, उसका कारण विश्व के बाहर कहीं मौजूद नहीं है, बल्कि

बेलगाम नियमों के तहत वह पहले के हालात का ही लाज़िमी नतीजा है और ये पहले के हालात भी अपने से पहले के हालात का ही लाज़िमी नतीजा था।

इस तरह विश्व में कारण और कार्य और क्रिया-प्रतिक्रया का एक अनन्त सिलसिला चल पड़ा है, यहां तक कि जिस रूप में सृष्टि के इतिहास की शुरुआत हुई, उसने आगामी घटनाओं की नियति तय कर दी। जब विश्व की पहली स्थिति एक बार तय हो गई तो क़ुदरत एक ही रास्ते पर चलने के लिए मजबूर थी। अर्थात् विश्व जिस दिन पैदा हुआ, उसका आने वाला कल भी उसी दिन निश्चित हो गया।

इस सिद्धांत को प्रकृति का आधारभूत नियम निश्चित करना सत्तरहवीं सदी की बहुत बड़ी घटना थी। अत: इसके साथ ही यह आन्दोलन चलाया गया कि पूरी सृष्टि को एक मशीन साबित किया जाए। 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में यह आन्दोलन अपनी चरम स्थिति पर पहुंच गया। यह वैज्ञानिक इंजीनियरों का दौर था। ये वैज्ञानिक क़ुदरत का मशीनी माडल बनाना चाहते थे। उसी समय हेल्म होल्ट्ज़ (Helm Holtz) ने कहा था, "सभी प्राकृतिक विज्ञानों का आखिरी मक़सद अपने आपको यांत्रिकी (Mechanics) में बदल लेना है।" हालांकि इस नियम के अनुसार विश्व की तमाम चीज़ों की व्याख्या करने में अभी वैज्ञानिकों को कामयांबी नहीं मिली थी, लेकिन उनका यक़ीन था कि विश्व की व्याख्या यांत्रिक ढंग से की जा सकती है। वे समझते थे कि सिर्फ़ थोड़ी-सी कोशिश की ज़रूरत है और आख़िरकार संपूर्ण विश्व एक चलती हुई मशीन साबित हो जाएगा।

आदमी की ज़िंदगी से इन बातों का सम्बन्ध पूर्णत: स्पष्ट था। कार्य-कारण सिद्धांत और विश्व की मशीनी व्याख्या को देखें तो इंसान बेबस साबित होता है, आदमी की शक्ति और उसके इख़्तियार पर यक़ीन करना मुश्किल हो जाता है। क्योंकि अगर यह नियम पूरी क़ुदरत पर हावी है तो ज़िंदगी इससे कैसे बच सकती है?

इस विचारधारा ने सत्तरहवीं और अठारहवीं सदी के मशीनी दर्शनों को जन्म दिया। जब यह खोज हुई कि जीवित कोशिका (Living Cell) भी बेजान पदार्थ की तरह महज़ रासायनिक तत्वों से बनी है, तो सवाल उठा कि जिन ख़ास तत्वों से हमारा शरीर और दिमाग़ बना है, वे इस कार्य-कारण सिद्धांत के दायरे से किस तरह बाहर हो सकते हैं?

अत: यह अनुमान किया गया, बल्कि ज़ोरदार ढंग से दावा कर दिया गया कि ज़िंदगी भी महज़ एक मशीन है। यहां तक कहा गया कि न्यूटन, बाख़ (Bach) और माइकल एंजिलों के दिमाग़ों और प्रिंटिंग मशीन में कुछ ज़्यादा फ़र्क़ नहीं था—सिवाय इसके कि इनके दिमाग़ों की बनावट थोड़ी-बहुत पेचीदा ज़्यादा थी और उनका काम सिर्फ़ यह था कि बाहरी प्रेरणाओं का पूरा-पूरा जवाब दें।

लेकिन अब विज्ञान इस तरह के जड़ और असंतुलित सिद्धांत को नहीं मानता। सापेक्षता का सिद्धांत (Theory of Relativity) इस नियम (कार्य-कारण नियम) को एक धोखा मानता है ; वह इसे भ्रम (Elusion) कहता है। उन्नीसवीं सदी के अंत में ही विज्ञान यह जान गया था कि प्रकृति की बहुत-सी चीज़ें, ख़ास तौर से प्रकाश और चुम्बकत्व, सृष्टि की मशीनी व्याख्या को नाकाम बना देती हैं। यह बहस अभी जारी थी कि क्या ऐसी कोई मशीन बनाई जा सकती है, जो न्यूटन के चिंतन, बाख़ की भावुकता और माइकल एंजिलो की कल्पनाशीलता को दोहरा सके, पर वैज्ञानिकों को बड़ी तेज़ी से विश्वास होता जा रहा था कि दीये की रोशनी और सेब का गिरना कोई मशीन नहीं दुहरा सकती।

प्राचीन विज्ञान ने बड़े विश्वास से कहा था कि प्रकृति सिर्फ़ एक ही रास्ता अपना सकती है, जो पहले दिन से कार्य व कारण की अनवरत शृंखला के तहत अंत तक के लिए नियत व निश्चित हो चुका है। लेकिन आख़िरकार विज्ञान को स्वयं यह मानना पड़ा कि विश्व का अतीत इतने अटल तौर पर उसके भविष्य का कारण नहीं है, जैसा कि पहले माना जाता था। अब ज़्यादातर वैज्ञानिक, नई जानकारी के आधार पर, इस बात पर एकमत हैं कि हमारा ज्ञान हमें एक ग़ैर-मशीनी सच्चाई (Non-Mechanical Reality) की तरफ़ ले जा रहा है।[1]

विश्व के जन्म और उसकी गति के बारे में ये दोनों दृष्टिकोण जो विज्ञान की तरक़्क़ी के साथ-साथ जन्मे थे, अभी तक विश्वास की हद तक नहीं पहुंच सके हैं। नई-नई खोजें इनकी ज़ड़ों को मज़बूत बनाने के बजाय और भी कमज़ोर बना देती हैं। इस तरह तो विज्ञान ख़ुद इस दृष्टिकोण का खंडन करता जा रहा है। अब आदमी दोबारा उसी मंज़िल पर पहुंच गया है, जिसको छोड़ कर उसने अपना नया सफ़र शुरू किया था। हमारे सामने फिर यह सवाल है कि विश्व को किसने बनाया और कौन इसे चला रहा है ?

1- कार्य-करण के सिद्धांत पर यहां जो उल्लेख किया गया है, वह जेम्स.जींस की पुस्तक "मिस्टीरियस यूनीवर्स" (Mysterious Universe) से उद्धृत है।

माबूद (उपास्य) की तलाश

यह स्रष्टा की तलाश की समस्या थी। इसके बाद दूसरी चीज़ जो आदमी जानना चाहता है, वह यह है कि 'मेरा माबूद कौन है ? वह कौन है, जिसके सामने अपना सब कुछ समर्पण करूं ?'

हम अपनी ज़िंदगी में साफ़ तौर पर एक शून्य, एक ख़ालीपन महसूस करते हैं, पर हम नहीं जानते कि इस ख़ालीपन को कैसे भरें ! यही शून्य का एहसास है, जिसे मैंने "माबूद की तलाश" कहा है। ख़ालीपन का यह एहसास दो पहलुओं से होता है :

अपने अस्तित्व और बाहर की दुनिया पर जब हम ध्यान देते हैं तो दो तीव्र और गहरे भाव हमारे अंदर उमडते हैं—पहला धन्यवाद, कृतज्ञता और एहसानमंदी का और दूसरा कमज़ोरी, हीनता और विनम्रता का !

ज़िंदगी में हम जिस तरफ़ भी देखते हैं हमें साफ़ दिखाई देता है कि हमारी ज़िंदगी किसी के एहसानों से ढंकी हुई है। यह देख कर देने वाले के लिए हमारे भीतर बेपनाह शुक्र और धन्यवाद का भाव उमड पड़ता है। हम अपनी तमाम अनमोल आस्थाएँ, अक़ीदतें परम उपकारी हस्ती पर न्योछावर कर देना चाहते हैं।

यह तलाश हमारे लिए महज़ एक दर्शन या फ़लसफ़े की चीज़ नहीं है। बल्कि हमारे मनोविज्ञान से इसका गहरा ताल्लुक़ है। यह सवाल मात्र एक बाहरी मसले को हल करने का सवाल नहीं है, बल्कि यह हमारी एक अंदरुनी प्यास है। हमारा पूरा अस्तित्व इस सवाल का जवाब चाहता है।

ज़रा सोचिए, क्या कोई संवेदनशील आदमी इस सच्चाई को नज़रअंदाज़ कर सकता है कि वह इस विश्वा में एक स्थायी घटना के रूप में मौजूद है, जबकि इसमें उसकी अपनी कोशिशों का कोई दख़ल नहीं है। वह अपने आप को एक ऐसे शरीर में पा रहा है, जिससे बेहतर शरीर की वह कल्पना भी नहीं कर सकता, हालांकि इस शरीर को उसने ख़ुद नहीं बनाया है। उसे ऐसी अजीबो-ग़रीब बौद्धिक क्षमताएँ दी गई हैं, जो किसी दूसरे प्राणी को नहीं दी गईं हैं, हालांकि इन क्षमताओं को पाने के लिए उसने कुछ भी नहीं किया है और न कुछ कर सकता है। हमारा अस्तित्व निजी नहीं है, बल्कि एक उपहार है। यह उपहार किसने दिया है ? आदमी का मन इस सवाल का जवाब मांगता है, ताकि वह अपने उस महान् दाता का शुक्र अदा कर सके, उसके प्रति आभार प्रकट कर सके।

फिर अपने शरीर से बाहर देखिए। दुनिया में हम इस हाल में पैदा होते हैं कि

हमारे पास अपना कुछ भी नहीं होता, न हमारा विश्व के ऊपर कोई बस चलता कि हम उसको अपनी ज़रूरत के अनुरूप बना सकें। हमारी हज़ारों ज़रूरतें हैं, पर किसी एक ज़रूरत को भी हम अपने आप पूरा नहीं कर सकते, लेकिन हम देखते हैं कि दुनिया में हैरत-अंगेज़ तौर पर हमारी तमाम ज़रूरतों को पूरा करने का इंतज़ाम किया गया है। ऐसा मालूम होता है कि विश्व अपने सभी साधनों के साथ इस बात के इंतज़ार में है कि आदमी पैदा हो और वह उसकी सेवा में लग जाए। मिसाल के तौर पर आवाज़ को लीजिए। आवाज़ के माध्यम से हम अपनी बात दूसरों तक पहुंचाते हैं। यह कैसे संभव हुआ कि हमारे ज़ेहन में पैदा होने वाले विचार ज़बान का स्पन्दन बन कर दूसरे के कान तक पहुंचें और वह उनको समझने लायक आवाज़ों के रूप में सुन सके ? इसके लिए हमारे अंदर और बाहर बेशुमार व्यवस्थाएं की गई हैं। उनमें से एक बीच का वह माध्यम है, जिसे हम हवा कहते हैं। हम जो शब्द बोलते हैं, वे बेआवाज़ लहरों के रूप में हवा पर उसी तरह सफ़र करते हैं, जिस तरह पानी की सतह पर लहरें पैदा होती हैं और बढ़ती चली जाती हैं।

मेरे मुंह से निकली हुई आवाज़ को आप तक पहुंचने के लिए बीच में हवा का मौजूद होना ज़रूरी है। बीच में हवा का यह माध्यम न हो तो आप मेरे होंठ हिलते हुए देखेंगे, पर मेरी आवाज़ न सुन सकेंगे। मिसाल के तौर पर एक बंद फ़ानूस के अंदर बिजली की घंटी रख कर बजाई जाए तो उसकी आवाज़ साफ़ सुनाई देगी, लेकिन अगर फ़ानूस के अंदर की पूरी हवा निकाल दी जाए और उसके बाद घंटी बजाई जाए तो आप शीशे के अंदर घंटी को बजता हुआ तो देखेंगे पर उसकी आवाज़ बिल्कुल भी सुनाई न देगी ; क्योंकि घंटी के बजने से जो स्पन्दन पैदा होता है, उसको ग्रहण करके आपके कानों तक पहुंचाने के लिए फ़ानूस के अंदर हवा मौजूद नहीं है।

लेकिन यह माध्यम भी काफ़ी नहीं क्योंकि हवा के माध्यम से तो हमारी आवाज़ पांच सेकंड में सिर्फ़ एक मील का फ़ासला तय करती है। इसका अर्थ हुआ कि हवा का माध्यम सिर्फ़ क़रीबी माहौल में बातचीत के लिए कारगर होता है। वह हमारी आवाज़ को दूर तक नहीं पहुंचा सकता। अगर आवाज़ सिर्फ़ हवा के माध्यम से फैलती तो इसको एक जगह से दूसरी जगह पहुंचाना संभव न होता। लेकिन क़ुदरत ने इसके लिए हमें एक और बेहद तेज़ रफ़्तार साधन उपलब्ध किया है। यह साधन प्रकाश या विद्युत तरंग है, जिसकी गति एक लाख छियासी हज़ार मील (186000 मील) प्रति सेकंड है। बेतार (Wireless) के संचार माध्यमों में इसी साधन का उपयोग होता है। जब कोई व्यक्ति रेडियो स्टेशन में लगे हुए माइक्रोफ़ोन के पास

आवाज़ निकालता है तो माइक्रोफ़ोन आवाज़ को ग्रहण करके उसे विद्युत तरंगों में बदल देता है और तार द्वारा उसको प्रसारण-यंत्र या ट्रांसमीटर तक भेज देता है। ट्रांसमीटर कंपित होकर वायुमंडल में वही कंपन पैदा कर देते हैं। इस तरह पांच सेकंड में एक मील चलने वाली आवाज़ बिजली की तरंगों में बदल कर करीब दो लाख मील प्रति सेकंड की रफ़्तार प्राप्त कर लेती है और पलभर में सारी दुनिया में फैल जाती है। इन्हीं बेतार की तरंगों को हमारे रेडियो सेट की मशीन ग्रहण करके ऊंची और साफ़ आवाज़ में उसे दुहरा देती है और फिर हज़ारों मील दूर बोली हुई आवाज़ को हम उसी पल सुनने लगते हैं।

यह उन अनगिनत व्यवस्थाओं में से एक है, जिसका मैंने वर्णन नहीं किया है, बल्कि उसका सिर्फ़ नाम लिया है। अगर इसका और दूसरी चीज़ों का विस्तृत वर्णन किया जाए तो इसके लिए हज़ारों पृष्ठ चाहिए और फिर भी उनका वर्णन ख़त्म नहीं होगा।

ये उपकार और सुविधाएं, जिनका उपभोग हर समय हर आदमी कर रहा है और जिनके बिना इस ज़मीन पर आदमी की ज़िंदगी और सभ्यता की कोई कल्पना नहीं की जा सकती। मनुष्य जानना चाहता है कि ये सब किसने उसके लिए उपलब्ध किया है। हर पल जब वह किसी उपकार से लाभान्वित होता है तो उसके दिल में बेपनाह शुक्र और अथाह कृतज्ञता के भाव पैदा होते हैं और वह चाहता है कि अपने उपकारकर्त्ता को पाये और अपने आपको उसके क़दमों में डाल दे। दाता के एहसानों को मानना, उसको अपने दिल की गहराइयों में जगह देना और अपनी उदात्त व श्रेष्ठतम भावनाओं को उसके सामने समर्पित करना—यह आदमी की प्रकृति का विशुद्धतम और उदात्त भावना है। इंसान की फ़ितरत का यह शरीफ़तरीन जज़्बा है। हर आदमी जो अपनी ज़िंदगी और दुनिया पर ध्यान देता है, उसके भीतर यह भावना बहुत शिद्दत से उभरती है। फिर क्या इस भावना का, इस जज़्बे का कोई जवाब नहीं? क्या आदमी इस विश्व में एक अनाथ बच्चा है, जिसके भीतर उमडते हुए प्रेम और समर्पण के भाव की तृप्ति के लिए कोई हस्ती मौजूद न हो? क्या यह एक ऐसा विश्व है, जहां एहसान और उपकार तो हैं पर दाता का पता नहीं, जहां भावना है, पर भावना की तृप्ति का कोई साधन नहीं?

माबूद की तलाश का यह एक पहलू है। इसका दूसरा पहलू यह है कि आदमी की हैसियत और उसके हालात का यह तक़ाज़ा है कि इस सृष्टि में उसका कोई सहारा हो। अगर हम आंख खोल कर देखें तो पाएंगे कि हम इस दुनिया में एक बहुत छोटे और बेबस प्राणी हैं। ज़रा उस शून्य की कल्पना कीजिए, जिसमें हमारी यह पृथ्वी

सूरज के चारों ओर चक्कर लगा रही है । आप जानते हैं कि पृथ्वी की गोलाई लगभग पच्चीस हज़ार मील है और वह नाचते हुए लट्टू की तरह अपनी धुरी पर लगातार इस तरह घूम रही है कि हर चौबीस घंटे में एक चक्कर पूरा हो जाता है । यानी पृथ्वी की रफ़्तार लगभग एक हज़ार मील प्रति घंटा है । इसी के साथ यह सूरज के चारों तरफ़ अट्ठारह करोड़ साठ लाख मील लम्बे दायरे में बहुत तेज़ रफ़्तार से दौड़ रही है ।

शून्य आकाश में इतनी तेज़ रफ़्तार से दौड़ती हुई पृथ्वी पर हमारा अस्तित्व क़ायम रखने के लिए पृथ्वी की रफ़्तार को एक ख़ास अंदाज़े के तहत रखा गया है । यदि ऐसा न हो तो पृथ्वी के ऊपर आदमी की हालत, उन कंकड़ों की तरह हो जाए, जो किसी चलते हुए पहिए पर रख दिए गए हों । इसी के साथ दूसरी व्यवस्था यह है कि पृथ्वी की आकर्षण शक्ति हमको खींचे हुए है और ऊपर से हवा का ज़बरदस्त दबाव है । हवा से जो दबाव पड़ रहा है, वह शरीर के प्रति वर्ग इंच पर 15 पौंड तक है ; यानी एक औसत आदमी के पूरे शरीर पर लगभग 280 मन का दबाव है । इस आश्चर्यजनक व्यवस्था ने हमको अंतरिक्ष में लगातार दौड़ती हुई पृथ्वी के चारों तरफ क़ायम कर रखा है ।

फिर ज़रा सूरज पर ध्यान दीजिए । सूरज की गोलाई आठ लाख पैंसठ हज़ार मील है, जिसका अर्थ यह है कि वह हमारी पृथ्वी से दस लाख गुना बड़ा है । यह सूरज आग का दहकता हुआ समुद्र है, जिसके करीब कोई भी चीज़ ठोस हालत में नहीं रह सकती । पृथ्वी और सूर्य के बीच इस समय लगभग साढ़े नौ करोड़ मील का फ़ासला है । अगर इसके बजाय वह इसके आधे फ़ासले पर होता तो सूर्य की गर्मी से चीज़ें जलने लगतीं । और अगर वह चांद की जगह पर यानी दो लाख चालीस हज़ार मील के फ़ासले पर आ जाए तो पृथ्वी पिघल कर भाप में बदल जाए । यही सूरज है, जिसकी बदौलत पृथ्वी पर जीवन है । इस उद्देश्य के लिए उसको एक ख़ास फ़ासले पर रखा गया है । अगर वह दूर चला जाए तो ज़मीन बर्फ़ की तरह जम जाए और अगर क़रीब आ जाए तो हम सब लोग जल-भुन कर राख हो जाएं ।

फिर ज़रा इस विश्व की व्यापकता और विस्तार को देखिए और उस गुरुत्वाकर्षण शक्ति पर ध्यान दीजिए जो इस महान विश्व को संभाले हुए है । विश्व एक असीम विस्तृत कारख़ाना है । इसके विस्तार का अंदाज़ा खगोल विज्ञान की दृष्टि में यह है कि प्रकाश, जिसकी रफ़्तार एक लाख छियासी हज़ार मील प्रति सैकिंड है, उसको विश्व के चारों ओर एक चक्कर पूरा करने में कई अरब साल लगेंगे । यह सौर-मंडल, जिसमें हमारी पृथ्वी भी शामिल है, देखने में तो बहुत बड़ा मालूम होता है, लेकिन पूरे विश्व की तुलना में इसकी कोई हैसियत नहीं । विश्व में इससे बहुत

बड़े-बड़े अनगिनत सितारे असीम विस्तार में फैले हुए हैं, जिनमें बहुत-से इतने बड़े हैं कि हमारा पूरा सौर-मंडल उसके ऊपर रखा जा सकता है। जो गुरुत्वाकर्षण शक्ति इन अनगिनत दुनियाओं को संभाले हुए है, उसकी महानता की कल्पना इससे की जा सकती है कि सूरज जिस बेपनाह ताक़त से पृथ्वी को अपनी तरफ़ खींच रहा है और उसको अनंत—असीम शून्य में गिर कर बरबाद होने से रोकता है, वह अदृश्य बल इतना अधिक शक्तिशाली है कि अगर इस उद्देश्य के लिए किसी भौतिक चीज़ से पृथ्वी को बांधना पड़ता तो जिस तरह घास की पत्तियां ज़मीन को ढके हुए है, उसी तरह धातु के तारों से पृथ्वी का धरातल ढक जाता।

हमारी ज़िंदगी पूरी तरह ऐसी ताक़तों पर निर्भर है, जिन पर हमारा कोई बस नहीं। आदमी की ज़िंदगी के लिए दुनिया में जो व्यवस्थाएं हैं और जिनकी मौजूदगी के बिना मानव-जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती, वह इतने ऊंचे स्तर पर हो रही हैं और उनको अस्तित्व में लाने के लिए इतनी ग़ैर-मामूली और असाधारण शक्तियां चाहिए कि आदमी स्वयं उन्हें अस्तित्व में लाने की कल्पना भी नहीं कर सकता। सृष्टि के लिए काम करने का जो तरीक़ा निश्चित किया गया है, उसे निश्चित करना तो दूर उस पर कंट्रोल करना भी आदमी के बस की बात नहीं। वह देखता है कि अगर विश्व की ग़ैर-मामूली ताक़तें उसके साथ तालमेल न करें तो वह ज़मीन पर ठहर भी नहीं सकता; ज़मीन पर एक सभ्य ज़िंदगी का निर्माण तो बहुत दूर की बात है।

ऐसे एक विश्व के अन्दर जब आदमी अपने तुच्छ अस्तित्व को देखता है तो वह अपने आपको इतना ज़्यादा बेबस महसूस करने लगता है, जैसे कि समुद्र की लहरों के बीच एक चींटी अपने आपको बचाने के लिए संघर्ष कर रही हो। वह बरबस चाहता है कि कोई हो जो इस अथाह विश्व में उसका सहारा बन सके। वह एक ऐसी हस्ती की पनाह ढूंढ़ना चाहता है, जो विश्व की शक्तियों से ऊपर हो और जिसकी पनाह में आ जाने के बाद वह अपने आपको सुरक्षित और निश्चिंत महसूस कर सके।

ये दो भावनाएं हैं, जिनको मैंने 'माबूद की तलाश' का नाम दिया है। माबूद की तलाश दरअसल एक स्वाभाविक जिज्ञासा है, जिसका अर्थ एक ऐसी हस्ती की तलाश है जो आदमी के प्रेम और आस्था का केन्द्र बन सके। आधुनिक युग में राष्ट्र, देश, वतन, क़ौम और राज्य को आदमी की इस प्यास का जवाब बनाकर पेश किया गया है। नई सभ्यता यह कहती है कि अपने राष्ट्र, अपने वतन और अपने राज्य को वह दर्जा दो कि वह तुम्हारी आस्थाओं का केन्द्र बने और उससे प्रतिबद्धता और लगाव को अपना सहारा बनाओ। इन चीज़ों को माबूद के नाम पर पेश नहीं किया जाता, किन्तु ज़िंदगी में इनको जो दर्जा दिया गया है वह लगभग वहं है, जो दरअसल एक माबूद का होना चाहिए।

लेकिन इन चीज़ों को माबूद की जगह देना बिल्कुल ऐसा ही है, जैसे किसी को एक जीवन-साथी की तलाश हो और उसे आप पत्थर की एक सिल थमा दें। खुली हुई बात है कि आदमी में तलाश की जो भावना सिर उठाती है, उसकी वजहें आदमी के अन्तःकरण में बहुत गहराई तक फैली हुई हैं। वह एक ऐसी हस्ती की तलाश में है, जो सारे विश्व पर छाई हो। इस चाह का जवाब किसी भौगोलिक सीमा-क्षेत्र में नहीं मिल सकता। राष्ट्रभक्ति की ये चीज़ें ज़्यादा से ज़्यादा एक समाज के निर्माण में कुछ मदद दे सकती हैं, पर वह आदमी की उस प्यास और भावना को संतुष्ट नहीं कर सकतीं, जिसका ताल्लुक़ उसके अपने माबूद से है। उसके लिए एक विश्वात्मक अस्तित्व चाहिए। आदमी को अपने प्रेम व आस्थाओं के केन्द्र के लिए एक ऐसा अस्तित्व चाहिए, जिसने ज़मीन और आसमान को बनाया हो। अपने सहारे के लिए उसे एक ऐसी ताक़त की तलाश है, जो किसी की मुहताज न हो, जो तमाम सृष्टि पर सत्तारूढ़ हो। जब तक इंसान ऐसे एक अस्तित्व को नहीं पाएगा, उसका शून्य और ख़ालीपन बदस्तूर बाक़ी रहेगा, कोई दूसरी चीज़ उसे नहीं भर सकती।

अंतिम परिणाम की तलाश

सच्चाई की तलाश का तीसरा पहलू है—अपने अंत या अपने अंजाम की तलाश। आदमी यह जानना चाहता है कि वह कहां से आया है और कहां जाएगा। वह अपने भीतर बहुत-से हौसले, बहुत-सी आशाएँ और आकांक्षाएं पाता है। वह मालूम करना चाहता है कि ये उमंगे और ये अनंत आकांक्षाएं कैसे पूरी होंगी ! वह इस वर्तमान सीमित ज़िंदगी के बजाय एक लम्बी ज़िंदगी चाहता है, पर वह नहीं जानता कि उसको कहाँ पाएगा। उसके भीतर बहुत-सी नैतिक भावनाएं और मानवीय संवेदनाएं हैं, जिन्हें इस दुनिया में बुरी तरह रौंदा जा रहा है। उसके मन में यह सवाल उठता है कि क्या वह अपनी पसंद की दुनिया को कभी पा न सकेगा ? ये सवाल किस तरह आदमी के अंदर से उबलते हैं और विश्व का अध्ययन किस तरह उसके ज़ेहन में यह सवाल पैदा करता है, यहां उसकी थोड़ी-सी व्याख्या करना उपयुक्त होगा।

जीव-विज्ञानियों का विचार है कि आदमी अपने मौजूदा रूप में तीन लाख वर्ष से पृथ्वी पर मौजूद है। इसकी तुलना में विश्व की उम्र बहुत ज़्यादा है ; यानी दो लाख अरब साल (20 नील साल)। इससे पहले विश्व बिजली के कणों के एक गुबार के रूप में थी ; फिर उसमें हरकत हुई और पदार्थ सिमट-सिमट कर विभिन्न जगहों पर जमा होना शुरू हो गया। यही वह जमा हुआ पदार्थ है, जिसको हम सितारे, ग्रह या नक्षत्र कहते हैं। पदार्थ के ये पिंड गैस के भयानक गोले के रूप में अनगिनत युगों तक आसमान में घूमते रहे। लगभग दो अरब साल पहले ऐसा हुआ कि विश्व का कोई बड़ा सितारा घूमता-घामता सूरज के पास आ निकला, जो उस समय अब से बहुत बड़ा था। जिस तरह चांद की आकर्षण-शक्ति से समुद्र में ऊंची-ऊंची लहरें उठती हैं, उसी तरह इस दूसरे सितारे के आकर्षण से हमारे सूरज पर एक बहुत बड़ा तूफ़ान उठा, ज़बरदस्त लहरें पैदा हुईं, जो धीरे-धीरे बहुत ऊंची होती गईं और इससे पहले कि वह सितारा सूरज से दूर हटना शुरू हो, उसकी आकर्षण-शक्ति इतनी ज़्यादा बढ़ गई कि सूरज की इन ज़बरदस्त गैस-लहरों के कुछ हिस्से टूट कर एक झटके के साथ दूर आसमान में निकल गए। यही बाद में ठंडे होकर सौर-मंडल के सदस्य बने। इस समय ये सब टुकड़े सूरज के चारों तरफ घूम रहे हैं और उन्हीं में से एक हमारी पृथ्वी है।

शुरू में पृथ्वी एक अंगारे की हालत में सूरज के चारों तरफ़ घूम रही थी, लेकिन

फिर आकाश में लगातार गर्मी छोड़ने की वजह से ठंडी होना शुरू हुई। यह प्रक्रिया करोड़ों साल तक चलती रही, यहां तक कि वह बिल्कुल ठंडी हो गई। पर सूरज की गर्मी अब भी उस पर पड़ रही थी, जिसके कारण भाप उठना शुरू हुई और बादलों के रूप में उसके वायुमंडल के ऊपर छा गई। फिर ये बादल बरसना शुरू हुए और पूरी पृथ्वी पानी से भर गई। पृथ्वी का ऊपरी हिस्सा तो ठंडा हो गया था पर उसका अंदरूनी हिस्सा अब भी गर्म था, जिसका नतीजा यह हुआ कि पृथ्वी सिकुड़ने लगी। इसके कारण पृथ्वी के अंदर की गर्म गैसों पर दबाव पड़ा और वे बाहर निकलने के लिए विकल हो उठीं ; थोड़े-थोड़े अर्से के बाद ज़मीन फटने लगी। जगह-जगह बड़ी-बड़ी दरारें पड़ने लगीं। इस तरह समुद्री तूफ़ान, भयानक भूकंपों और आग उगलने वाले धमाकों में हज़ारों वर्ष बीत गए। इन्हीं भूकंपों से पृथ्वी का कुछ हिस्सा ऊपर उभर आया और कुछ हिस्सा दब गया। दबे हुए हिस्सों में पानी भर गया और वे समुद्र कहलाए। उभरे हुए हिस्सों ने द्वीपों व महाद्वीपों का रूप ले लिया। कहीं-कहीं यह उभार इतना उठा कि ऊंची-ऊंची बाढ़ें-सी बन गईं। ये दुनिया के पहले पहाड़ थे।

भूगर्भशास्त्रियों का विचार है कि एक अरब 23 करोड़ साल हुए, जब पहली बार पृथ्वी पर ज़िंदगी पैदा हुई। ये छोटे-छोटे कीड़े थे, जो पानी के किनारों पर पैदा हुए। इसके बाद क़िस्म-क़िस्म के जीव-जन्तु पैदा होते और मरते रहे। कई हज़ार साल तक ज़मीन पर केवल पशु रहे। इसके बाद समुद्री पौधे नमूदार हुए और शुष्क धरती पर भी घास उगना शुरू हुई। इस तरह लम्बे समय तक बेशुमार घटनाएं घटती रहीं, यहां तक कि मानव-जीवन के लिए अनुकूल परिस्थितियां बनीं और धरती पर आदमी पैदा हुआ।[1]

इस विचारधारा के अनुसार आदमी की ज़िंदगी की शुरुआत पिछले तीन लाख साल से हुई है। यह अवधि बहुत ही कम है। समय का जो रास्ता सृष्टि ने तय किया है, उसकी तुलना में आदमी का इतिहास पलक झपकने से ज़्यादा लम्बा नहीं है। फिर यदि इंसानियत की इकाई को लीजिए, तो मालूम होगा कि एक इंसान की उम्र का औसत सौ साल से भी कम है। एक तरफ़ इस घटना को सामने रखें और फिर इस सच्चाई पर ध्यान दें कि विश्व में आदमी से बेहतर कोई अस्तित्व पता नहीं लगाया जा सका है।

1- ज़िंदगी और विश्व के उत्पन्न होने के सम्बन्ध में जो विभिन्न दृष्टिकोण पेश किये गये हैं, जिनमें सबसे अधिक लोकप्रिय और प्रसिद्ध दृष्टिकोण यही है जिसका सार-संक्षेप ऊपर बयान हुआ है

धरती और आकाश की अरबों-खरबों साल की गर्दिश के बाद जो बेहतरीन रचना अस्तित्व में आई है, वह इन्सान है। पर यह चमत्कारी हस्ती—इन्सान—जो सारी दुनिया में सबसे ऊंचा दर्जा रखता है, जो तमाम मौजूद चीज़ों में सर्वश्रेष्ठ है, उसकी ज़िंदगी कुछ साल से ज़्यादा नहीं। हमारा अस्तित्व जिन पदार्थों से बना है, उनकी उम्र तो अरबों-खरबों साल हो और हमारे मरने के बाद भी वे बाक़ी रहें, मगर इन पार्थिव चीज़ों के मिलने से जो श्रेष्ठतम अस्तित्व बनता है, वह सिर्फ़ सौ वर्ष ज़िंदा रहे। सृष्टि का जो-फल है, वह सृष्टि से भी कम उम्र रखता है। सृष्टि के लम्बे इतिहास में अनगिनत घटनाएं और क्रिया-प्रतिक्रियाएं क्या सिर्फ़ इसलिए हुई थीं कि एक आदमी को कुछ दिनों के लिए पैदा करके ख़त्म कर दें?

पृथ्वी पर आज जितने आदमी पाए जाते हैं, उनमें का हर आदमी अगर छः फुट लम्बा, ढाई फुट चौड़ा और एक फुट मोटा हो तो इस पूरी आबादी को एक ऐसे संदूक़ में आसानी से बंद किया जा सकता है, जो लम्बाई, चौड़ाई और मोटाई में एक मील हो। बात कुछ अजीब-सी मालूम होती है, पर सच्चाई यही है। फिर इस सन्दूक़ को किसी समुद्र के किनारे ले जाकर एक हल्का-सा धक्का दे दें तो यह संदूक पानी की गहराई में जा गिरेगा। सदियां बीत जाएंगी, आदमी की पूरी नस्ल अपने कफ़न में लिपटी हुई हमेशा के लिए पड़ी रहेगी। कोई जान भी न सकेगा कि आदमी नाम की कोई नस्ल यहां कभी आबाद थी। समुद्र की सतह पर इसी तरह बदस्तूर तूफ़ान आते रहेंगे, सूरज इसी तरह चमकता रहेगा, पृथ्वी अपनी धुरी पर बदस्तूर चक्कर लगाती रहेगी, सृष्टि के असीमित फैलाव में फैली हुई अनगिनत दुनियाएं इतने बड़े हादसे को एक मामूली घटना से ज़्यादा महत्व न देंगी। कई सदियों के बाद एक ऊंचा-सा मिट्टी का ढेर ख़ामोश गवाही देगा कि यह मानव-जाति की क़ब्र है, जहां वह सदियों पहले एक छोटे से सन्दूक़ में दफ़न की गई थी।

क्या आदमी की बस इतनी-सी क़ीमत है, बस इतना-सा उसका महत्व है? पदार्थ को कूटिए-पीटिए-जलाइए, कुछ भी कीजिए वह ख़त्म नहीं होता। वह हर स्थिति में अपने अस्तित्व को बनाए रखता है (चाहे वह ठोस अवस्था में रहे, द्रव रूप में रहे या गैस रूप में)। लेकिन आदमी, जो पदार्थ से उच्चतर प्राणी है, क्या उसके लिए अमरत्व नहीं? यह ज़िंदगी जो सारे विश्व का सार है, क्या इतनी अवास्तविक और मिथ्या है कि इतनी आसानी से उसे ख़त्म किया जा सकता है? क्या मानव-जीवन की यही कुल कहानी है कि वह धरती के एक टुकड़े पर चंद दिनों के लिए पैदा हो और फिर नष्ट होकर रह जाए? समूचा मानव-ज्ञान और उसकी उपलब्धियां, उसकी सफलताएं उसके साथ हमेशा के लिए समाप्त हो जाएं और

दुनिया इस तरह उसके पीछे बाक़ी रह जाए, जैसे उसके लिए आदमी की कोई हैसियत ही नहीं थी ?

इस संबंध में दूसरी बात हमें यह महसूस होती है कि यदि यह ज़िंदगी बस इस दुनिया की ज़िंदगी है तो यह एक ऐसी ज़िंदगी है, जिसमें हमारी उमंगें व आशाएं पूरी नहीं हो सकतीं। आदमी हमेशा जीवित रहना चाहता है, किसी को भी मौत पसंद नहीं, लेकिन इस दुनिया में हर पैदा होने वाला जानता है कि वह अमर नहीं है। आदमी ख़ुशी पाना चाहता है, हर आदमी की इच्छा होती है कि वह दुख-दर्द और हर तरह की तकलीफ़ों के बिना जीवन बिताए, मगर सही अर्थों में क्या कोई भी आदमी ऐसी ज़िंदगी हासिल कर सकता है ?

हर आदमी चाहता है कि उसको अपनी आकांक्षाएं पूरी करने का मौक़ा आख़िरी क्षण तक मिले, वह अपनी सारी इच्छाओं को पूर्ण होता देखना चाहता है, पर इस सीमित जगत् में वह ऐसा नहीं कर सकता। हम जो कुछ चाहते हैं, यह दुनिया उसके लिए बिल्कुल नाकाफ़ी और अयोग्य मालूम होती है। वह हर क़दम पर हमारा रास्ता रोक कर खड़ी हो जाती है, दुनिया सिर्फ़ एक हद तक हमारा साथ देती है, उसके बाद हमको निराश और नाक़ाम लौटना पड़ता है।

सवाल यह है कि क्या इंसानी ज़िंदगी महज़ ग़लती से एक ऐसी दुनिया में भटक आई है, जो दरअसल उसके लिए नहीं बनाई गई थी और जो आदमी की ज़िन्दगी और उसके मामलों से, उसके हितों से पूरी तरह बेपरवाह, अनजान और अप्रतिबद्ध है ? क्या हमारी सभी भावनाएं, विचार, अनुभूतियां, आशाएं, इच्छाएं और आकांक्षाएं अवास्तविक और मिथ्या हैं, झूठ हैं—जिनका इस दुनिया से कोई संबंध नहीं ?

क्या हमारी सभी उच्चकोटि की कल्पनाएं, विश्व के रास्ते से हटे हुए हैं और हमारे मन में बिल्कुल अललटप तरीक़े से अनायास पैदा हो गए हैं ? वे सभी अनिभूतियाँ, जिनको लेकर मानव-जाति पिछले हज़ारों साल से पैदा हो रही है और जिनको अपने सीने में लिए हुए वह इस हाल में दफ़न हो जाती है कि वह उन्हें प्राप्त न कर सकी, क्या उन अनिभूतियों की कोई मंज़िल नहीं ? क्या वे आदमी के मन में बस योंही पैदा हो रही हैं, जिनकी बुनियाद न तो अतीत में मौजूद है और न भविष्य में उनका कोई मूल्य है ?

सारे विश्व में केवल आदमी का एक ऐसा अस्तित्व है, जो कल (Tomorrow) की कल्पना करता है। यह सिर्फ इंसान की विशेषता है, जो भविष्य के बारे में सोचता है और अपने भविष्य को बेहतर व उज्ज्वल बनाना चाहता है। इसमें शक नहीं कि कुछ प्राणी जैसे चींटियां अपना भोजन जमा करती है या बया घोंसले बनाता है, पर

उनका यह कार्य अचेतन रूप से महज़ नैसर्गिक स्वभाव से होता है । उनकी अक़्ल इसका फ़ैसला नहीं करती कि उन्हें भोजन इकट्ठा करके रखना चाहिए ताकि कल उनके काम आ सके या ऐसा घर बनाना चाहिए जो हर मौसम में तकलीफ़ से बचाए । मानव और अन्य प्राणियों के बीच इस अंतर से पता चलता है कि मानव को तमाम दूसरी चीज़ों से ज़्यादा मौक़ा मिलना चाहिए; जानवरों के लिए ज़िंदगी सिर्फ़ आज की ज़िंदगी है, वे ज़िंदगी का कोई कल नहीं रखते । क्या इसी तरह आदमी की ज़िंदगी का भी कल नहीं है ? ऐसा होना प्रकृति के विरुद्ध है । आदमी में आने वाले कल की जो कल्पना पाई जाती है, उसका तक़ाज़ा है कि आदमी की ज़िंदगी उससे कहीं ज़्यादा बड़ी हो, जितनी आज उसे हासिल है । इंसान कल चाहता है पर उसे सिर्फ़ 'आज' दिया गया है ।

इसी तरह जब हम सामाजिक जीवन को देखते हैं तो हमें ज़बरदस्त विरोधाभास मालूम होता है । एक तरफ़ भौतिक व पार्थिव दुनिया है, जो अपनी जगह पर बिल्कुल सम्पूर्ण दिखाई देती है । वह एक निश्चित क़ानून में जकड़ी हुई है और उसकी हर चीज़ अपने तयशुदा रास्ते पर चली जा रही है । दूसरे शब्दों में, भौतिक दुनिया ऐसी है जैसी उसे होना चाहिए था, पर आदमी की दुनिया का हाल इससे अलग है । यहां हाल उससे विपरीत है, जैसा कि उसे होना चाहिए था ।

साफ़ तौर पर हम देखते हैं कि एक आदमी दूसरे आदमी पर ज़ुल्म करता है और दोनों इस हाल में मर जाते हैं कि एक ज़ालिम होता है और दूसरा मज़लूम, एक अत्याचारी होता है और दूसरा उत्पीड़ित । क्या ज़ालिम को उसके ज़ुल्म की सज़ा और मज़लूम को उसकी मज़लूमियत का बदला मिले बिना दोनों की ज़िंदगी को मुकम्मल कहा जा सकता है ?

एक आदमी सच बोलता है, उस पर लोगों के जो हक़ हैं उन्हें निभाता है । इसके नतीजे में उसकी ज़िंदगी कठिनाइयों से भर जाती है । दूसरा आदमी झूठ और धोखे से काम लेता है और जिसकी जो चीज़ पाता है, हड़प लेता है । इसके नतीजे में उसकी ज़िंदगी ऐशोआराम की ज़िंदगी बन जाती है । अगर यह दुनिया इसी हाल में ख़त्म हो जाए तो दोनों तरह के आदमियों का फ़ैसला क्या हो, क्या इसका कोई उपाय है ? एक क़ौम दूसरी क़ौम पर डाका डालती है और उसके साधन व सुविधाओं पर क़ब्ज़ा कर लेती है, पर इसके बावजूद दुनिया में वही नेकनाम रहती है, क्योंकि उसके पास संचार और प्रचार के तमाम साधन हैं और दबी हुई क़ौम की हालत से दुनिया अनजान होती है, क्योंकि उसकी आह को दुनिया के कानों तक पहुंचने का कोई साधन नहीं । क्या इन दोनों की सही हैसियत कभी ज़ाहिर नहीं होगी ? दो व्यक्तियों

और दो क़ौमों या जातियों में किसी एक बात पर मतभेद होता है और ज़बरदस्त कशमकश तक नौबत आ पहुंचती है। दोनों अपने-आपको सच्चाई पर होने का दावा करते हैं और दूसरे को बेहद बुरा साबित करते हैं, पर दुनिया में उनके मुक़द्दमे का फ़ैसला नहीं होता। क्या ऐसी कोई अदालत नहीं है, जो उनके बीच ठीक-ठीक फ़ैसला कर सके?

आज के युग को एटमी युग कहा जाता है लेकिन अगर इसे स्वेच्छाचारिता का युग कहा जाए तो ज़्यादा सही होगा। आज का आदमी सिर्फ़ अपनी राय और अपनी इच्छा पर चलना चाहता है, चाहे उसकी राय और इच्छा कितनी ही ग़लत क्यों न हो। हर आदमी भटका हुआ है, भ्रष्ट है पर हर आदमी पूरी ताक़त के साथ अपने को सही साबित कर रहा है। अख़बारों में नेताओं और शासकों के बयान देखिए, हरेक पूरी निर्भीकता और बेशर्मी के साथ अपने अत्याचार को न्याय और अपने ग़लत कामों को सही काम साबित करता दिखाई देगा। क्या इस धोखे से पर्दा कभी नहीं हटेगा?

यह बात साफ़ तौर पर ज़ाहिर करती है कि यह दुनिया अधूरी है। इसे सम्पूर्ण व समग्र बनाने के लिए एक ऐसी दुनिया चाहिए, जहां हरेक को उसका सही स्थान मिल सके। भौतिक दुनिया में हम देखते हैं कि जहां कोई शून्य या ख़ालीपन है वहां उसे पूरा करने के उपाय मौजूद हैं। भौतिक दुनिया में कहीं कोई कमी दिखाई नहीं देती। जबकि आदमी की ज़िंदगी में ज़बरदस्त ख़ालीपन है। जिस कुदरत ने भौतिक दुनिया का पूरा-पूरा विकास किया है क्या उसके पास आदमी की दुनिया का ख़ालीपन भरने का उपाय नहीं?

हमारा स्वभाव और हमारी अनुभूति कुछ कामों को अच्छा और कुछ को बुरा समझती है। हम कुछ बातों को चाहते हैं कि वे हों और कुछ बातों को चाहते हैं कि वे न हों। इसके बावजूद हमारी ये अच्छी व उदात्त भावनाएं धरी रह जाती हैं और दुनिया में वह सब कुछ हो रहा है, जिसको आदमी की मूल प्रकृति बुरा समझती है। आदमी में उदात्त भावनाओं की मौजूदगी का अर्थ है कि दुनिया सच्चाई पर क़ायम हुई है। यहां अन्याय के बजाय न्याय की स्थापना होनी चाहिए। फिर क्या न्याय पूरा नहीं होगा, फिर क्या सच्चाई प्रकट नहीं होगी? जो चीज़ भौतिक दुनिया में पूरी हो रही है, क्या वह आदमी की दुनिया में पूरी नहीं होगी।

यही वे सवाल हैं, जिनको मैंने ऊपर 'इंसानियत के अंजाम की तलाश' कहा है। एक विवेकशील आदमी जब इन हालात को देखता है तो वह बेचैन हो उठता है। वह शिद्दत से महसूस करता है कि ज़िंदगी अगर यही है, जो इस समय दिखाई दे रही है, तो यह कितनी बेहूदा और बकवास है। वह एक तरफ़ देखता है कि आदमी की

ज़िंदगी के लिए दुनिया में इतने साधन व सुविधाएं हैं कि जैसे सब कुछ सिर्फ़ उसी के लिए है, दूसरी तरफ़ आदमी की ज़िंदगी इतनी अधूरी, नाकाम और बेसहारा है कि समझ में नहीं आता कि उसको किसलिए पैदा किया गया है ?

इस सवाल के बारे में आज, लोगों का रुझान आम तौर पर यह है कि इस तरह के झंझट में पड़ना फ़िज़ूल और बेमानी है। ये सब दार्शनिक सवाल हैं। और यथार्थवादिता यह है कि ज़िंदगी का जो क्षण तुम्हें मिला है उसे आनंदमय बनाने की कोशिश करो, भविष्य में क्या होगा, या जो कुछ हो रहा है, वह सही है या ग़लत, इसकी चिंता में पड़ने की ज़रूरत नहीं।

इस जवाब के बारे में कम-से-कम जो बात कही जा सकती है, वह यह कि जो लोग इस ढंग से सोचते हैं, उन्होंने अभी इंसानियत के मर्म को नहीं पहचाना। वे मिथ्या को सत्य समझ लेना चाहते हैं। घटनाएँ उन्हें अनंत जीवन का रहस्य जानने के लिए बुला रही है पर वे चंद दिनों के जीवन पर संतुष्ट हुए बैठे हैं। इंसान के अन्तर्भावना व स्वभाव का तक़ाज़ा है कि अपनी उमंगों, हौसलों और आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए वह एक बड़ी दुनिया की तलाश करे पर ये नादान रोशनी के बजाय उसके साये को काफ़ी समझ रहे हैं। विश्व पुकार रहा है कि यह दुनिया तुम्हारे लिए अधूरी है, दूसरी मुकम्मल व संपूर्ण दुनिया की तलाश करो। पर हमारा फ़ैसला है कि हम इसी अधूरी दुनिया में अपनी ज़िंदगी की इमारत खड़ी करेंगे। हमको संपूर्ण दुनिया की ज़रूरत ही नहीं। हालात और परिस्थितियां साफ़ इशारा कर रही हैं कि ज़िंदगी का एक अंत आना चाहिए। लेकिन ये लोग सिर्फ आरंभ को लेकर बैठ गए हैं और अंत की तरफ़ से इन्होंने आंखें बंद कर ली हैं। यह वैसी ही हिमाक़त है, जो शुतुरमुर्ग़ के बारे में कही जाती है।

अगर सचमुच ज़िंदगी का कोई अंत है तो वह आकर रहेगा और किसी का उसके प्रति अनजान बना रहना उसको रोकने का कारण नहीं बन सकता। हां, उसके लिए नाकामी का फ़ैसला ज़रूर बन सकता है। सच्चाई यह है कि मौजूदा ज़िंदगी को पूर्ण ज़िंदगी समझना और सिर्फ़ आज को आनंदमय बनाने की कोशिश को अपना मक़सद बना लेना कम हिम्मत और नासमझी की बात है। आदमी अगर अपनी ज़िंदगी और विश्व पर थोड़ा-सा भी विचार करे तो इस नज़रिये का आधार तुरंत ही ढह जाता है। ऐसा फ़ैसला वही कर सकता है, जो सच्चाई की तरफ़ से आंख बंद कर ले और एक बेसमझी-बूझी ज़िंदगी गुज़ारना शुरू कर दे।

ये हैं वे कुछ सवाल, जो विश्व को देखते ही गंभीरता के साथ हमारे ज़ेहन में उभरते हैं। इस सृष्टि का एक स्रष्टा व निर्माता होना चाहिए, पर हमें उसके बारे में कुछ

भी पता नहीं। इसका एक चलाने वाला और संभालने वाला होना चाहिए, पर हम नहीं जानते कि वह कौन है। हम किसी के एहसानों से ढके हुए हैं और शुक्र, एहसानमंदी व धन्यवाद की साक्षात् प्रतिमा बनकर उस हस्ती को ढूंढ़ना चाहते हैं, जिसके सामने अपनी आस्था और श्रद्धा के भाव प्रकट कर सकें, लेकिन ऐसा कोई अस्तित्व हमें दिखाई नहीं देता। हम इस विश्व में बहुत लाचार और बेबस हैं। हमको एक ऐसी पनाह और शरण चाहिए, जहां पहुंच कर हम अपने आपको सुरक्षित महसूस कर सकें। लेकिन ऐसी कोई पनाह हमारी आंखों के सामने मौजूद नहीं है। फिर जब हम अपनी ज़िंदगी और अपनी उम्र को देखते हैं तो विश्व का यह विरोधाभास हमको समझ में नहीं आता कि विश्व की उम्र तो खरबों साल हो और आदमी, जो इस सृष्टि का सार है, उसकी उम्र सिर्फ़ चंद साल! यह कैसे हो सकता है कि कुदरत हमें बेशुमार उमंगों, आशाओं, हौसलों और आकांक्षाओं से तो भर दे पर दुनिया में उसकी तृप्ति का उपाय न उपलब्ध कराए?

फिर सबसे बड़ा विरोधाभास वह है, जो भौतिक-जगत् और मानव-जगत् में पाया जाता है। भौतिक दुनिया पूरी तरह संपूर्ण है। उसमें कहीं कोई ख़ालीपन और कमी दिखाई नहीं देती, पर आदमी की ज़िंदगी में ज़बरदस्त ख़ालीपन है। सर्वश्रेष्ठ माने जाने वाले इस प्राणी की हालत सारे प्राणी-जगत् में निम्नतर नज़र आती है। हमारा दुर्भाग्य है कि अगर पेट्रोल के किसी नए भंडार का पता चले या भेड़-बकरियों की नस्ल बढ़े तो इससे हम ख़ुश होते हैं, लेकिन आदमी की नस्ल का बढ़ना हमें गवारा नहीं। हम अपनी कठिनाइयों और समस्याओं से इतने परेशान हैं कि इंसान की पैदाइश को रोक देना चाहते हैं।

आदमी की बेबसी

ये सवाल हमको चारों तरफ़ से घेरे हुए हैं। ये अंदर से भी उबल रहें हैं और बाहर से भी हमें घेरे हुए हैं, किन्तु इनका जवाब हमें नहीं मालूम। यह ज़िंदगी की सच्चाई जानने का सवाल है, पर कितनी अजीब बात है कि हमें ज़िंदगी तो मिल गई, पर उसकी वास्तविकता हमें नहीं बताई गई।

इस सच्चाई की तलाश में जब हम अपनी अक़्ल और अपने तजुर्बों की तरफ़ देखते हैं तो पता चलता है कि इसका सही और स्पष्ट जवाब पाना हमारी अक़्ल और तजुर्बे के बस से बाहर है। इस संबंध में अब तक हमने जो रायें क़ायम की हैं वे किसी अटकल से ज़्यादा महत्व नहीं रखतीं। जिस तरह हमारी नज़र का दायरा सीमित है और हम एक विशेष आकार से छोटी चीज़ को नहीं देख सकते और एक विशेष फ़ासले से आगे की चीज़ों को नहीं देख सकते, उसी तरह विश्व के बारे में हमारा ज्ञान भी एक तंग दायरे तक सीमित है, जिसके आगे या पीछे की हमें कोई ख़बर नहीं। हमारा ज्ञान अधूरा है। हमारी देखने, सुनने, सूंघने, चखने और छूने की सामर्थ्य बहुत सीमित है। हमारी संवदेनशक्ति एक हद तक हमारा साथ देती है। हम हक़ीक़त को नहीं देख सकते। मैदा और कालिख को अगर मिला दिया जाए तो भूरा और राख जैसे रंग का पावडर-सा बन जाता है, लेकिन इस पावडर का बारीक कीड़ा, जो पावडर के कणों ही के बराबर होता है और सिर्फ़ सूक्ष्मदर्शी से देखा जा सकता है, वह इसको कुछ काली और कुछ सफेद रंग की चट्टान समझता है। उसकी दृष्टि के पैमाने में भूरा पावडर कोई चीज़ नहीं।

मानव-जाति की ज़िंदगी उस समय की तुलना में जब कि पृथ्वी अस्तित्व में आई, इतनी छोटी और संक्षिप्त है कि किसी गिनती में नहीं आती और स्वयं पृथ्वी विश्व के अथाह समुद्र में एक कण के बराबर भी नहीं। ऐसी हालत में आदमी विश्व की सच्चाई के बारे में जो कल्पना या विचार करता है, उसे अंधेरे में टटोलने से ज़्यादा कुछ नहीं कहा जा सकता। हमारा परम अज्ञान उसी पल उजागर हो जाता है, जब हम सृष्टि के विस्तार की कल्पना करने की कोशिश करते हैं।

अगर आप इस बात को सामने रखें कि सूरज अस्सी खरब साल से मौजूद है; इस पृथ्वी की उम्र दो अरब साल है और धरती पर ज़िंदगी के आसार प्रकट हुए तीन करोड़ साल बीत चुके हैं, लेकिन इसकी तुलना में पृथ्वी पर विवेक-संपन्न आदमी का इतिहास पन्द्रह-बीस हज़ार साल से ज़्यादा का नहीं तो यह सच्चाई उजागर हो जाती

है कि चंद हज़ार साल का समय, जिसमें आदमी ने अपनी जानकारी जुटाई है, उस लम्बे ज़माने का एक बहुत छोटा-सा अंश है, जो कि वास्तव में सृष्टि का रहस्य जानने के लिए चाहिए।

सृष्टि के बेहद लम्बे अतीत और अनंत-अनजान भविष्य के बीच आदमी की ज़िंदगी महज़ एक क्षण की हैसियत रखती है। हमारा अस्तित्व बहुत छोटा और दरमियानी है, जिसके आगे और पीछे की हमें कोई ख़बर नहीं। हमारी अक़्ल को बहुत विवशता के साथ स्वीकार करना पड़ता है कि इस सृष्टि का विस्तार असीमित है और इसे समझने के लिए हमारी अक़्ल और हमारा अनुभव बिल्कुल नाकाफ़ी है। हम अपनी सीमित क्षमताओं द्वारा कभी भी इसको नहीं समझ सकते। अब तक की कोशिशों की असफलता इसको साबित करने के लिए काफ़ी है।

इस तरह हमारा ज्ञान और हमारा अध्ययन हमको एक ऐसी जगह पर लाकर छोड़ देता है, जहां हमारे सामने बहुत से सवाल हैं, ऐसे सवाल जो निश्चित तौर पर अपना जवाब चाहते हैं। उनके बिना आदमी की ज़िंदगी बिल्कुल बेमानी और बेकार दिखाई देती है। लेकिन जब हम उनके बारे में सोचने बैठते हैं, तो हमें पता चलता है कि हम अपने दिमाग़ से उनका जवाब नहीं पा सकते। हमको वह आंख ही नहीं मिली, जिससे सच्चाई के दर्शन किए जा सकें और वह दिमाग़ हमें नहीं मिला जो प्रत्यक्ष रूप से सच्चाई को समझ सके।

पैग़म्बर की ज़रूरत

इस मौक़े पर एक व्यक्ति हमारे सामने आता है और कहता है कि जिस सच्चाई को तुम मालूम करना चाहते हो, उसका ज्ञान मुझे दिया गया है और वह यह है—

"इस सृष्टि का एक ईश्वर है, जिसने सारी सृष्टि को बनाया है ; और अपनी असाधारण शक्तियों द्वारा इसकी व्यवस्था संभाले हुए है। जो चीज़ें तुम्हें हासिल हैं वे सब तुम्हें उसी ने दी हैं और हर मामले उसी के अधीन हैं। यह जो तुम देख रहे हो कि भौतिक दुनिया में कोई विरोधाभास नहीं, वह ठीक-ठीक अपना काम कर रही है, जबकि इंसानी दुनिया अधूरी नज़र आती है, यहां ज़बदरस्त धांधली मची है, इसका कारण यह है कि आदमी को आज़ादी देकर उसे आज़माया जा रहा है। तुम्हारा मालिक यह चाहता है कि उसका क़ानून जो भौतिक जगत् में प्रत्यक्ष रूप से लागू हो रहा है, उसको इंसान अपनी ज़िंदगी में ख़ुद लागू करे। यही अस्तित्व सृष्टि का निर्माता है। वही उसकी देखभाल करने वाला है। तुम्हारे धन्यवाद और कृतज्ञता का वही सच्चा अधिकारी है और वही है जो तुमको पनाह दे सकता है। उसने तुम्हारे लिए एक अनंत-असीमित ज़िंदगी का इंतज़ाम कर दिया है, जो मरने के बाद आने वाली है, जहां तुम्हारी उमंगें व आशाएं पूरी हो सकेंगी, जहां सच और झूठ अलग-अलग कर दिए जाएंगे और भलों को उनकी भलाई और बुरों को उनकी बुराई का बदला दिया जाएगा। उसने मेरे माध्यम से तुम्हारे पास अपनी किताब भेजी है, जिसका नाम क़ुरआन है। जो इसको मानेगा कामयाब होगा और जो उसको न मानेगा ज़लील और बेइज़्ज़त होगा।"

यह मुहम्मद (सल्ल०) की आवाज़ है, जो लगभग डेढ़ हज़ार वर्ष पहले अरब के रेगिस्तान से बुलंद हुई थी और आज भी हमको पुकार रही है। उसका संदेश है कि अगर सच्चाई को जानना चाहते हो, तो मेरी आवाज़ पर कान लगाओ और मैं जो कुछ कहता हूं उस पर ध्यान दो।

क्या यह आवाज़ सचमुच सच्चाई की आवाज़ है ; क्या हमें इस पर ईमान लाना चाहिए, इस पर विश्वास करना चाहिए। वह कौन-सी कसौटी है, जिससे इसके सही या ग़लत होने का फ़ैसला किया जाएगा ?

कुछ लोगों का विचार है कि इस सच्चाई को वे उस वक़्त मानेंगे, जब वह उन्हें आंखों से दिखाई देगी। वे सच्चाई को अपनी आंखों से देखना चाहते हैं। पर यह

ात वैसी ही है, जैसे कोई अंकगणित की जानकारी के बिना खगोल विज्ञान पढ़ने की ोशिश करे और कहे कि वह खगोल विज्ञान की केवल उन्हीं बातों को मानेगा, जो से खुली आंखों से दिखाई देती हैं। अंक-गणित के तर्क मानने को वह तैयार नहीं। सका यह आग्रह ज़ाहिर करता है कि आदमी को अपनी सामर्थ्य और क्षमताओं की ही जानकारी नहीं है।

आदमी की देखने की शक्ति सीमित है। सच्चाई को देख पाना उसके बस से हर है। हम उसे महूसस तो कर सकते हैं पर उसे देख नहीं सकते। एक समय था, ब समझा जाता था कि दुनिया चार चीज़ों से बनी है—आग, पानी, हवा और मिट्टी। सरे शब्दों में पहले आदमी इस ग़लतफ़हमी में था कि सच्चाई एक ऐसी चीज़ है, से देखा जा सकता है, पर नए अविष्कारों ने इसे ग़लत साबित कर दिया है। अब म जानते हैं कि दुनिया की तमाम चीज़ें सूक्ष्म एटमों (परमाणुओं) से बनी हैं। एटम क औसत दर्जे के सेब से उतना ही छोटा होता है, जितना सेब हमारी ज़मीन से।

एटम एक तरह से सौर मंडल (Solar System) है, जिसका एक केंद्र है। इस द्र में प्रोटॉन और न्यूट्रॉन होते हैं और इसके चारों तरफ़ इलेक्ट्रॉन अलग-अलग यरों में इस तरह गति करते हैं, जैसे सूरज के चारों तरफ़ उसके ग्रह चक्कर लगाते । एक इलेक्ट्रॉन, जिसका आकार सेंटीमीटर का पांच हज़ार करोड़वां हिस्सा है और अपने केन्द्र के चारों तरफ़ एक सेकंड में करोड़ों बार चक्कर लगाता है, उसकी ल्पना करना भी कठिन बल्कि असंभव है। जबकि हमें यह भी नहीं मालूम कि यह दरूनी दुनियाओं की आख़िरी हद है या नहीं। हो सकता है कि इन दुनियाओं के तर इनसे भी छोटी दुनियाएं हों।

इससे स्पष्ट होता है कि हमारी देखने की शक्ति कितनी कमज़ोर है। फिर सवाल है कि प्रोटोन और न्यूट्रोन के बेहद सूक्ष्म कण जो आपस में मिल कर केन्द्र बनाते वे किस तरह स्थिर हैं। आख़िर ये न्यूट्रॉन और प्रोटोन केन्द्र से बाहर क्यों नहीं कल पड़ते। वह क्या चीज़ है, जो उन्हें एक-दूसरे से बांधे हुए है। वैज्ञानिकों का चार है कि इन भौतिक कणों के बीच एक ऊर्जा मौजूद है और यही ऊर्जा केन्द्र के ट्रोन और प्रोटॉन नामक कणों को आपस में जकड़े हुए है। उसको प्रतिबद्ध ऊर्जा inding Energy) का नाम दिया गया है। यानी पदार्थ अपने आख़िरी अंश में र्जा है। मैं पूछता हूं कि क्या यह ऊर्जा आंखों से देखी जा सकती है? क्या किसी सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) से इसे देखा जा सकता है? इससे साबित होता है कि धुनिक विज्ञान ने ख़ुद यह मान लिया है कि सच्चाई अपने आख़िरी रूप में एक न ी जाने लायक चीज़ है; उसको आदमी की आंख नहीं देख सकती।

अब अगर रसूल की बात को मानने के लिए हम यह शर्त लगाएं कि वह जिन

सच्चाइयों की ख़बर दे रहा है, वे हमें छूने और देखने को मिलनी चाहिए, तब हम उ मानेंगे, तो यह बहुत बेवकूफ़ी वाली बात होगी। यह ऐसी ही बात होगी जैसे भारती इतिहास का कोई विद्यार्थी ईस्ट इंडिया कंपनी के बारे में पढ़ते वक़्त अपने अध्याप से कहे कि कंपनी के तमाम पात्र मेरे सामने लाकर खड़े करो और वे मेरे सामने तमा बीती हुई घटनाओं को दोहराएं, तब जाकर मैं तुम्हारे इतिहास को मानूंगा।

फिर वह कौन-सी कसौटी है, जिसके आधार पर हम यह फ़ैसला करें कि य संदेश सही है या ग़लत, और हमें इसे स्वीकार करना चाहिए या नहीं? मेरी दृष्टि इस संदेश को जांचने के तीन ख़ास पहलू हैं। पहला यह कि इसकी व्याख्या सच्च से कितनी समानता रखती है। दूसरा यह कि ज़िंदगी के अंजाम के बारे में इस दावा महज़ दावा है या इसकी कोई दलील भी इसके यहां मिलती है और तीसरा य कि इसके पेश किए गए संदेश में क्या ऐसी कोई असाधारण विशेषता पाई जा रही कि इसको ईश्वर की वाणी कहा जा सके। इन तीनों पहलुओं से जब हम रसूल काम का जायज़ा लेते हैं तो मालूम होता है उनमें से हर पहलू पर वह निहा सफलता के साथ पूरा उतर रहा है—

1. रसूल ने सृष्टि की जो व्याख्या की है, उसमें हमारी तमाम पेचीदगियों का ह मौजूद है। हमारे अंदर और हमारे बाहर जितने सवाल पैदा होते हैं, उन सबका व बेहतरीन जवाब है।

2. ज़िंदगी के अंजाम के बारे में उसका जो दावा है, उसके लिए वह एक सा दलील भी अपने पास रखता है। वह यह कि मौजूदा ज़िंदगी में वह उसके अंजाम एक नमूना भी हमें दिखा देता है, जिसको बाद की ज़िंदगी में आने की वह ख़बर रहा है।

3. वह जिस कलाम (वाणी) को ईश्वर का कलाम कहता है, उसमें इत असाधारण विशेषता पाई जाती है कि मानना पड़ता है कि निश्चय ही यह किसी मह अलौकिक शक्ति का कलाम है, किसी आदमी की वाणी ऐसी नहीं हो सकती।

आइए, अब इन तीनों पहलुओं से रसूल के संदेश का जायज़ा लें।

पैग़म्बर की सच्चाई

उसकी (पैग़म्बर के संदेश की) पहली खुली हुई विशेषता यह है कि वह आदमी ; अन्त:चेतना से मेल खाती है। इसका अर्थ यह है कि आदमी की जन्मजात जो कृति है, वही प्रकृति इस व्याख्या की भी है। इस व्याख्या की बुनियाद एक ईश्वर के ास्तित्व पर रखी गई है और एक ईश्वर की चेतना आदमी की प्रकृति और स्वभाव शामिल है। इसके दो निहायत मज़बूत आधार हैं। एक यह है कि मानव-इतिहास ; सभी ज्ञात युगों में इंसानों के बहुमत ने, बल्कि लगभग पूरी जनसंख्या ने ईश्वर के ास्तित्व को माना है। इंसान पर कभी भी ऐसा कोई दौर नहीं गुज़रा है, जब उसकी ड़ी तादाद ईश्वर की चेतना से ख़ाली रही हो। प्राचीनतम कालों से लेकर आज तक ानव-इतिहास की सर्वसम्मत गवाही यही है कि ईश्वर की चेतना मानव-प्रकृति की िहायत शक्तिशाली चेतना है। दूसरा आधार यह है कि आदमी जब कठिन घड़ी में ता है तो उसका दिल बरबस ईश्वर को पुकार उठता है, जहां कोई सहारा दिखाई हीं देता, वह ख़ुदा का सहारा ढूंढ़ता है। पढ़ा-लिखा हो या अनपढ़, धार्मिक हो या धार्मिक, खुले दिमाग़ वाला हो या तंग दिमाग़ वाला, जब भी उस पर कोई ऐसा क आता है, जहां आदमी की ताक़तें जवाब देती दिखाई देती हैं तो वह एक ऐसी स्ती को पुकारता है, जो तमाम ताक़तों से बढ़ कर ताक़तवर है और जो तमाम क़तों का ख़ज़ाना है। आदमी अपने नाज़ुक क्षणों में ख़ुदा को याद करने पर मजबूर । उसकी एक दिलचस्प मिसाल हमें स्टालिन की ज़िंदगी में मिलती है। इसका ल्लेख चर्चिल ने दूसरे विश्वयुद्ध से संबंधित अपनी पुस्तक के चौथे भाग के पृष्ठ 3 पर किया है—

1942 के नाज़ुक हालात में जब हिटलर सारे यूरोप के लिए ख़तरा बना हुआ था, र्चिल ने मास्को की यात्रा की थी। इस मौक़े पर चर्चिल ने स्टालिन को संयुक्त फ़ौजी र्रवाई के बारे में अपनी योजना बताई। चर्चिल लिखते हैं कि इस योजना पर तचीत करते-करते एक ऐसा बिंदु आया जिस पर स्टालिन ने बेहद दिलचस्पी खाई और वह इतना ख़ुश और उत्साहित हो उठा कि बरबस उसके मुंह से निकला, 'ay God prosper this undertaking." (ईश्वर इस मुहिम को कामयाब करे।)[1]

1- Quoted by Syed A. Latif "The Mind Al-Quran Builds" P–94

इसी के साथ नबी की आवाज़ की यह विशेषता है कि वह उन तमाम सवालों क संपूर्ण व्याख्या है, जो आदमी जानना चाहता है और जो विश्व व जगत् को देखक हमारे ज़ेहन में उभरते हैं।

विश्व के अध्ययन ने हमें इस नतीजे पर पहुंचाया था कि यह महज़ इत्तिफ़ाक़ र नहीं पैदा हो सकती, ज़रूर इसका कोई पैदा करने वाला होना चाहिए। इस व्याख्या इस सवाल का जवाब मौजूद है। हमको लग रहा था कि दुनिया महज़ एक भौति मशीन नहीं है। उसके पीछे कोई असाधारण ज़ेहन होना चाहिए, जो उसे चला रह हो। इस व्याख्या में इस सवाल का जवाब भी मौजूद है। हमको उस कृपालु हस्त की तलाश थी और एक ऐसी हस्ती की तलाश थी जो हमारा सहारा बन सके। इ व्याख्या में उसका जवाब भी मौजूद है।

हमें यह बात बड़ी अजीब मालूम हो रही थी कि आदमी की ज़िंदगी इतन छोटी-सी क्यों है। हम आदमी को अमर देखना चाहते थे। हम अपने लिए एक ऐ विस्तृत मैदान की तलाश में थे, जहां हमारी आशाएं व उमंगें पूरी हो सकें। इ व्याख्या में इसका जवाब भी मौजूद है। फिर आदमी के हालात का यह तक़ाज़ा थ कि सच का सच होना और झूठ का झूठ होना स्पष्ट हो और अच्छे और बु अलग-अलग कर दिए जाएं। हर आदमी को उसका सही स्थान दिया जाए। इ सवाल का जवाब भी इस व्याख्या में मौजूद है। तात्पर्य यह कि ज़िंदगी के बारे सारे सवालों का पूरा-पूरा जवाब है और इतना बेहतर जवाब है कि इससे बेहत जवाब की हम कल्पना भी नहीं कर सकते। इससे वे सारे सवाल हल हो जाते हैं, ज विश्व के अध्ययन से हमारे ज़ेहन में पैदा हुए थे।

उसके संदेश की दूसरी बड़ी विशेषता यह है कि ज़िंदगी के अंजाम के बारे वह जो दृष्टिकोण पेश करता है, उसका एक व्यवहारिक नमूना ख़ुद अपनी ज़िंदगी हमें दिखा देता है। वह कहता है कि दुनिया इसी तरह ज़ालिम और मज़लू अत्याचारी और उत्पीड़ित को लेकर ख़त्म नहीं हो जाएगी, बल्कि उसके अंत के बा सृष्टि का मालिक प्रकट होगा और सच्चों और झूठों को एक-दूसरे से अलग-अल कर देगा। उस दिन के आने में जो देर है वह सिर्फ़ इस परीक्षा के क्रिया-कलाप क समाप्त होने की है जो तुम्हारे लिए नियत कर दी गई है।

यह बात वह सिर्फ़ कह कर नहीं छोड़ देता, बल्कि इसी के साथ उसका दावा य भी है कि मैं जो कुछ कहता हूं, उसके सही होने का सबूत यह है कि उस अदालत क एक नमूना विश्व का मालिक मेरे माध्यम से इसी दुनिया में तुमको दिखाएगा। मे माध्यम से वह सच को प्रतिष्ठित और झूठ को पराजित करेगा, अपने आज्ञाकारि को इज़्ज़त देगा और अवज्ञाकारियों को बेइज़्ज़त व ज़लील करके उन्हें अज़ाब औ

प्रकोप में डालेगा। यह सच्चाई घट कर रहेगी, चाहे दुनिया के लोग कितना ही विरोध करें और सारी ताक़त उसे मिटाने पर लगा दें।

जिस तरह परलोक (आख़िरत) का होना निश्चित रूप से तय है और कोई उसे रोक नहीं सकता, उसी तरह मेरी ज़िंदगी में उसका नमूना दिखाया जाना भी निश्चित है। यह एक निशान होगा आने वाले दिन का और यह दलील होगी इस बात की कि सृष्टि का निर्माण इंसाफ़ और न्याय पर हुआ है और यह कि मैं जिस ताक़त का नुमाइंदा (प्रतिनिधि) हूं वह एक ऐसी ताक़त है, जो सब ताक़तों से ऊपर है। यह ताक़त एक दिन तुमको अपने सामने खड़ा करके तमाम अगले-पिछले इंसानों का फ़ैसला करेगी।

यह चुनौती वह उस समय देता है, जब कि वह अकेला है। पूरी क़ौम उसकी दुश्मन हो गई है। ख़ुद उसका देश उसको जगह देने को तैयार नहीं। उसके क़रीबी रिश्तेदारों ने भी उसका साथ छोड़ दिया है। उसके पास कोई भौतिक साधन व सुविधाएं नहीं। ऐसा एक आदमी पूरे विश्वास के साथ घोषणा करता है कि जीत मेरी होगी और मेरे माध्यम से ईश्वर की अदालत धरती पर क़ायम होगी।

सुनने वाले उसका मज़ाक उड़ाते हैं, पर वह निहायत गंभीरता से अपना काम करता चला जाता रहा है। देश के बहुसंख्यक लोग उसकी हत्या करने का फ़ैसला करते हैं, उसका सब कुछ तबाह कर देते हैं, उसको वतन छोड़ने पर मजबूर कर देते हैं, उसको मिटाने के लिए अपनी समूची शक्ति लगा देते हैं, पर ये सब कुछ उसके सामने बेअसर साबित होते हैं। हालांकि बहुत थोड़े लोग उसका साथ देते हैं। एक तरफ़ मुट्ठी भर साथी होते हैं और दूसरी तरफ़ ज़बरदस्त बहुसंख्यक! एक तरफ़ साधन व साज़ोसामान होता है और दूसरी तरफ़ साधनहीनता। एक तरफ़ मुल्क और क़ौम का समर्थन होता है तो दूसरी तरफ़ अपनों और ग़ैरों का एकजुट विरोध। ऐसे कठिन हालात में उसके साथी अक्सर घबरा उठते हैं, पर वह हर बार यही कहता है कि इंतज़ार करो, ख़ुदा का फ़ैसला आकर रहेगा। उसको कोई ताक़त रोक नहीं सकती।

चौथाई सदी भी नहीं बीत पाई थी कि उसकी चुनौती पूरी हो जाती है और इतिहास में अपने ढंग की अकेली घटना घटती है। एक शख़्स ने जिन दावों के साथ अपना काम शुरू किया था, ठीक उसी रूप में उसका दावा पूरा हुआ और उसके विरोधी उसमें कोई कमी-बेशी न कर सके। झूठ और सच अलग-अलग हो गया। ईश्वर के आज्ञाकारियों को इज़्ज़त और प्रतिष्ठा मिली और अवज्ञाकारियों का ज़ोर तोड़ कर उन्हें शासित बना दिया गया।

इस तरह इस संदेश ने मनुष्यों को जिस अंजाम की ख़बर दी थी, उसका एक नमूना दुनिया में क़ायम कर दिया गया। जो क़ियामत तक के लिए एक सबक़ है। इस नमूने की पूर्णता आख़िरत में होगी, जब सारे मनुष्यों को ईश्वर की अदालत में

हाज़िर करके उनका फ़ैसला किया जाएगा ।

इस आदमी के दावों के सच होने का तीसरा सबूत वह कलाम है, जिसे वह कलामे-इलाही (ईश-वाणी) कह कर पेश करता है । इस कलाम को आए कितनी ही सदियां बीत चुकी हैं, पर उसकी महानता, उसकी सच्चाई और हक़ीक़त के बारे में उसके बयान का एक शब्द भी ग़लत साबित न हो सका, जबकि कोई भी मानवीय पुस्तक ऐसी नहीं है, जो कमियों और त्रुटियों से वंचित हो ।

दूसरे शब्दों में क़ुरआन ख़ुद इस बात की दलील है कि वह ख़ुदा की किताब है, ईश्वरीय ग्रंथ है । उसके बहुत से पहलू हैं, पर मैं यहां सिर्फ़ तीन पहलुओं का उल्लेख करूंगा । एक उसकी ग़ैर-मामूली शैली, दूसरे उसके अर्थों में विरोधाभास न होना, तीसरी उसकी शाश्वतता !

क़ुरआन : अपनी दलील आप

क़ुरआन एक ग़ैर-मामूली कलाम है। उसको पढ़ते हुए साफ़ मालूम होता है कि सका लेखक एक ऐसे ऊंचे स्थान से बोल रहा है, जो किसी भी आदमी को हासिल हीं। उसकी इबारत और अभिव्यक्ति की गरिमा; उसकी बेपनाह रवानी और प्रवाह; सके दो टूक, निर्णायक और बेलाग बयान आश्चर्यजनक हद तक मानवीय वाणी से भन्न हैं। जिससे साफ़ तौर पर मालूम होता है कि यह सृष्टि के मालिक की आवाज़ है, केसी इंसान की आवाज़ नहीं। उसकी विश्वास भरी और गरिमापूर्ण वाणी ख़ुद बोल ही है कि यह ईश्वर की किताब है, जिसमें ईश्वर अपने बंदों को संबोधित कर रहा ै।

क़ुरआन में सृष्टि की वास्तविकता बताई गई है, इंसान के अंजाम की ख़बर दी ाई है और ज़िंदगी के खुले और छुपे हालात पर बातचीत की गई है। लेकिन यह ब कुछ इतने दो टूक अंदाज़ में बयान हुआ है कि घटनाएं प्रत्यक्ष मालूम होती हैं। ़ुरआन को पढ़ते हुए ऐसा महसूस होता है, जैसे आदमी को सच्चाई का ज्ञान नहीं दया जा रहा है, बल्कि उसको हक़ीक़त के सामने ले जाकर खड़ा कर दिया गया है। ह घटना को किताब के पृष्ठ पर नहीं पढ़ रहा है, बल्कि स्क्रीन के ऊपर उसे अपनी ख़ुली आंखों से देख रहा है। वाणी की सहजता, स्पष्टता और दो टूकपन ज़ाहिर कर हा है कि यह एक ऐसी हस्ती का कलाम है, जिसको सच्चाइयों का सीधा ज्ञान है। कोई आदमी जो सच्चाई का निजी ज्ञान न रखता हो, वह अपनी बात में हरगिज़ ऐसा ोर और निश्चितता पैदा नहीं कर सकता। यहां मैं नमूने के तौर पर क़ुरआन की एक छोटी-सी सूरह का अनुवाद पेश करूंगा—

"जब आसमान फट जाएगा, जब सितारे बिखर जाएंगे, जब दरिया उबल पड़ेंगे, जब क़ब्रें उलट दी जाएंगी, उस दिन हर शख़्स जान लेगा जो उसने आगे भेजा और जो उसने पीछे छोड़ा। ऐ इंसान, तुझको अपने मालिक के बारे में किस चीज़ ने धोखे में डाल रखा है, जिसने तुझे बनाया, तेरी सूरत ठीक-ठीक और संतुलित बनाई। उसने जैसा चाहा वैसा तुमको बनाया। नहीं, बल्कि तुम फ़ैसले (के दिन) का इन्कार करते हो। हालांकि तुम्हारे ऊपर नज़र रखने वाले तैनात हैं सही-सही लिखने वाले। वे जानते हैं, जो तुम करते हो। यक़ीनन अच्छे लोगों के लिए नेमतें हैं और यक़ीनन बुरे लोगों के लिए जहन्नम है। वे फ़ैसले के दिन उसमें डाले जाएंगे और वे हरगिज़ उससे भाग नहीं सकते और क्या तुम जानते हो कि फ़ैसले का दिन

क्या है। फिर क्या तुम जानते हो कि फ़ैसले का दिन क्या है। वह एक ऐसा दिन है जब कोई किसी के काम न आएगा और उस दिन सिर्फ़ ख़ुदा का हुक्म चलेगा।"[1]

कितना विश्वास से भरा है यह कलाम, जिसमें ज़िंदगी का आरंभ और अंत सब कुछ बयान कर दिया गया है। कोई भी मानवीय पुस्तक, जो जीवन और विश्व के बारे में लिखी गई हो, इस विश्वास और यक़ीन की मिसाल पेश नहीं कर सकती। सैकड़ों वर्षों से आदमी विश्व की वास्तविकता पर विचार कर रहा है, बड़े-बड़े दार्शनिक और वैज्ञानिक पैदा हुए, पर कोई इतने विश्वास के साथ बोलने का साहस न कर सका। विज्ञान आज भी यह मानता है कि वह किसी निश्चित और सही ज्ञान से अभी बहुत दूर है, जबकि क़ुरआन इतने विश्वास के साथ बात कहता है जैसे वह सच्चाई से आख़िरी हद तक वाकिफ़ है।

क़ुरआन के ईश्वरीय होने की दूसरी दलील यह है कि उसने अलौकिक व प्राकृतिक विषयों से लेकर सांस्कृतिक समस्याओं तक तमाम महत्त्वपूर्ण विषयों पर बातचीत की है, लेकिन कहीं भी उसके बयानों में विरोधाभास नहीं पाया जाता। इस वाणी को आए लगभग डेढ़ हज़ार साल बीत चुके हैं। इस दौरान बहुत-सी नई-नई बातें आदमी को पता चली हैं, पर उसकी बातों में अब भी कोई विरोधाभास प्रकट नहीं हो सका; हालांकि आदमियों में से किसी एक दार्शनिक का भी नाम इस हैसियत से नहीं लिया जा सकता कि उसकी बातें विरोधाभास या विवाद से परे हों। इस बीच हज़ारों दार्शनिक व चिंतक पैदा हुए, जिन्होंने अपनी बुद्धि से ज़िंदगी और सृष्टि की व्याख्या करने की कोशिश की, पर बहुत जल्द उनकी बातों में विरोधाभास प्रकट होने लगा और वक़्त ने उन्हें रद्द कर दिया।

किसी वाणी का विरोधाभास से परे होना इस बात का सबूत है कि वह पूरी तरह सच्चाई और वास्तविकता के अनुकूल है। जो आदमी सच्चाइयों का ज्ञान न रखता हो या सिर्फ़ आंशिक ज्ञान उसे हो तो वह जब भी सच्चाई बयान करने बैठेगा तो निश्चय ही वह विरोधाभास का शिकार हो जाएगा। वह एक पहलू की व्याख्या करते समय दूसरे पहलू का ख़याल नहीं रख सकेगा। वह एक रुख़ को खोलेगा तो दूसरे रुख़ को बंद कर देगा। ज़िंदगी और विश्व की व्याख्या का सवाल एक शाश्वत और सर्वव्यापी सवाल है। उसके जवाब के लिए सारी सच्चाइयों का ज्ञान होना ज़रूरी है। और चूंकि आदमी अपनी सीमित क्षमताओं द्वारा सारी सच्चाइयों को नहीं जान सकता, इसलिए वह सारे पहलुओं का पूरा ध्यान नहीं रख सकता। यही कारण है कि

1- यहां यह बात ध्यान में रखने की है कि अनुवाद में वह प्रवाह नहीं आ सकता, जो मूल शब्द में है।

आदमी के बनाए हुए दर्शन में विरोधाभास का होना निश्चित है। क़ुरआन की यह विशेषता है कि वह इस तरह के विरोधाभास से रहित है। यह इस बात की दलील है कि वह सच्चाई की सही-सही व्याख्या है। उसके सिवा तमाम व्याख्याएं ग़लत हैं। इस तथ्य को मैं मिसाल के साथ स्पष्ट करूंगा।

1—ज़िंदगी के विषय पर जो किताब लिखी जाए उसका एक ज़रूरी अध्याय ज़िंदगी के कर्त्तव्य तय करना है। आदमी के कर्त्तव्य, फ़र्ज़ और ज़िम्मेदारियां तय करने में ज़रूरी है कि उनके विभिन्न पहलुओं का बराबर और ठीक-ठीक ध्यान रखा जाए। ऐसा न हो कि एक पहलू से कोई ऐसा हुक्म दिया जाए जो दूसरे पहलू से टकराता हो। मसलन, औरत और मर्द की हैसियत तय करना सामाजिक व सभ्य ज़िंदगी की एक महत्वपूर्ण समस्या है। आज के प्रगतिशील दौर ने यह निश्चित किया है कि औरत और मर्द के बीच समानता होनी चाहिए और जीवन के हर क्षेत्र में दोनों को समान रूप से काम करने का मौक़ा दिया जाना चाहिए, लेकिन यहां आदमी का बनाया हुआ यह सामाजिक उसूल यथार्थ से टकरा रहा है, यानी इस सच्चाई से कि जीव-विज्ञान (Biology) के अनुसार स्त्री और पुरुष के बीच समानता नहीं और यह संभव नहीं कि दोनों समान रूप से ज़िंदगी का बोझ उठा सकें। इसके विपरीत क़ुरआन ने सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन में औरत और मर्द का जो स्थान निश्चित किया है वह दोनों की पैदाइशी विशेषता के अनुकूल है और क़ानून तथा यथार्थ के बीच कोई विरोध पैदा नहीं होता।

2—मार्क्स ने क्रांति का यह दर्शन पेश किया है कि जिस तरह एक सार्वभौमिक या सर्वव्यापी गुरुत्वाकर्षण के नियम से सितारे हरकत कर रहे हैं उसी तरह कुछ अटल ऐतिहासिक नियम हैं, जो सामाजिक परिवर्तन का कारण बनते हैं। ये नियम निरंतर अपना काम कर रहे हैं और इसी के अनुसार मानव-जीवन में क्रांतियां घटित होती हैं, और इस दर्शन को पेश करने के साथ उसने यह नारा भी लगाया—

"दुनिया के मज़दूरो एक हो जाओ !"

ज़ाहिर है कि ये दोनों बातें एक-दूसरे के विरोध में हैं। अगर सामाजिक परिवर्तनों का कोई अटल ऐतिहासिक नियम है तो राजनैतिक संघर्ष (या वर्ग संघर्ष) की ज़रूरत ही नहीं और अगर राजनैतिक संघर्ष द्वारा क्रांति घटित होती है तो फिर अटल ऐतिहासिक नियम का क्या अर्थ है ?

इसके विपरीत क़ुरआन मानवीय संकल्प या इंसानी इरादे को स्वीकार करता है। उसका दर्शन यह है कि ज़िंदगी में जो घटनाएँ घटित होती हैं वह आदमी की अपनी कोशिशों का नतीज़ा होती हैं। भौतिक जगत की तरह इन घटनाओं का कोई निश्चित तर्क नहीं है, बल्कि आदमी की कोशिश उसे कोई भी रूप दे सकती है। निश्चय ही,

प्रकृति के कुछ नियम हैं, पर उनके काम का ढंग यह है कि वे आदमी की कोशिशों का साथ देकर उसे मंज़िल तक पहुंचा देते हैं, न कि स्वयं आदमी की कोशिशें इन नियमों का वाह्य आरोपित नतीजा है। इस तरह क़ुरआन के दृष्टिकोण और उसके संदेश (उसकी दावत) में कोई विरोधाभास नहीं। वह जब अपने दृष्टिकोण को व्यावहारिक रूप देने के लिए लोगों को पुकारता है तो वह अपने दर्शन की पुष्टि करता है, न कि उसका खंडन। इसके विपरीत मार्क्सवादी दर्शन उसके व्यावहारिक कार्यक्रम से साफ़ टकरा रहा है। कम्युनिस्ट पार्टियों का अस्तित्व सही अर्थों में मार्क्सवादी दर्शन का खंडन है। कम्युनिस्ट घोषणा-पत्र का आख़िरी वाक्य उसके पहले वाक्य को रद्द कर देता है।

क़ुरआन की शिक्षाओं को अगर आप मानवीय दर्शनों की तुलना में रखकर देखें तो इस तरह की बहुत-सी मिसालें पाएंगे।

3—क़ुरआन की तीसरी विशेषता यह है कि वह लगभग डेढ़ हजार वर्ष से धरती पर मौजूद है। इस दौरान कितनी क्रांतियां हुई हैं, इतिहास में कितनी उलट-पलट हुई है, कितने युग बदले हैं, ज़माने ने कितनी करवटें ली हैं, लेकिन अब तक उसकी कोई बात ग़लत साबित नहीं हुई। वह हर ज़माने की बौद्धिक संभावनाओं और सांस्कृतिक-सामाजिक आवश्यकताओं का निरंतर साथ देता चला जा रहा है, उसकी शिक्षाओं की प्रासंगिकता और शाश्वस्तता कहीं भी ख़त्म नहीं होती, बल्कि हर युग की समस्याओं पर हावी होती चली जा रही है। यह इस महान किताब की एक ऐसी विशेषता है जो किसी भी इन्सानी किताब को अब तक प्राप्त नहीं हो सकी है। मनुष्य का बनाया हुआ हर दर्शन चंद ही दिनों बाद अपनी ग़लती ज़ाहिर कर देता है। मगर सदियों पर सदियां गुज़रती जा रही हैं और इस किताब की सच्चाई और प्रामाणिकता में कोई फ़र्क़ नहीं आता।

यह क़ानून उस समय बनाया गया था, जब अरब के असभ्य और बिखरे हुए क़बीलों में इस्लामी रियासत क़ायम करने की समस्या पैदा हुई थी। लेकिन उसके बाद सदियों तक वह इस्लामी हुकूमतों की तमाम ज़रूरतें पूरी करता रहा और मौजूद प्रगतिशील दौर में भी न सिर्फ़ वह नए ज़माने का साथ देने की पूरी योग्यता रखता है बल्कि सिर्फ वही एक ऐसी व्यवस्था है जो सही अर्थों में ज़िंदगी की समस्याओं को हल कर सकती है। डेढ़ हज़ार वर्ष पहले जिस तरह उसने अपनी श्रेष्ठता साबित की थी, आज भी वह उसी तरह तमाम दर्शनों व फ़लसफ़ों में श्रेष्ठतम हैसियत रखता है।

यह क़ुरआन का चमत्कार है कि ज़िंदगी के बारे में उसने जो दृष्टिकोण पेश किया था और व्यक्ति और समाज के व्यवहार के लिए जो ढांचा बनाया था वह आज भी न तो पुराना हुआ है और न उसमें कोई कमी या त्रुटि ढूंढ़ी जा सकती है। इस दौरान कितने दर्शन उभरे और ख़त्म हो गए, कितनी व्यवस्थाएं बनीं और बिगड़ गईं, लेकिन

क़ुरआन के दृष्टिकोण की सच्चाई व प्रामाणिकता और उसकी व्यावहारिक व्यवस्था की उपयोगिता आज भी अपनी जगह पर क़ायम है। यह हवा और पानी की तरह देश-काल की सीमा से आज़ाद है। मैं यहां दोनों पहलुओं से एक-एक मिसाल पेश करूंगा।

क़ुरआन ने दावा किया था कि विश्व को चलाने वाला एक ज़ेहन है, जो अपने इरादे से उसे गति दे रहा है। क़ुरआन ने यह दावा यूरोप के पुनर्जागरण से बहुत पहले किया था। उसके बाद बहुत-से दार्शनिक और वैज्ञानिक उठे, जिन्होंने बड़े ज़ोर-शोर से यह दावा किया कि विश्व महज़ एक भौतिक मशीन है जो अपने आप चल रही है। यह विचारधारा दो सौ वर्ष तक मनुष्य के दिमाग़ों पर छाई रही ऐसा लगने लगा कि ज्ञान के विकास ने क़ुरआन के दावे को रद्द कर दिया है। लेकिन इसके बाद स्वयं विश्व के अध्ययन से वैज्ञानिकों ने जाना कि ज़िंदगी और सृष्टि की व्याख्या महज़ भौतिक नियमों द्वारा नहीं की जा सकती। अब विज्ञान दिन-प्रतिदिन क़ुरआन की इस विचारधारा की तरफ़ लौट रहा है कि इस विश्व के पीछे एक ज़ेहन है, जो अपने इरादे से इसे चला रहा है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर जेम्स जीन्स इस परिवर्तन के बारे में लिखते हैं—

"ज्ञान-विज्ञान ने पिछले चंद बरसों में निहायत तेज़ी से एक नया मोड़ लिया है। तीस साल पहले हमारा विचार था या हमने मान लिया था कि हम एक ऐसी आख़िरी सच्चाई की तरफ़ बढ़ रहे हैं, जो अपने तौर पर मशीनी है। ऐसा लगता था कि सृष्टि एटमों के एक ऐसे बेतरतीब अम्बार से बनी है, जो संयोग या इत्तिफ़ाक़ से इकट्ठे हो गए हैं और उनका काम यह है कि व्यर्थ, निरुद्देश्य या अंधी ताक़तों के तहत जो कोई चेतना नहीं रखतीं, कुछ समय के लिए एक निरर्थक नृत्य करें, जिसके ख़त्म होने पर महज़ एक मुर्दा विश्व बाक़ी रह जाए। इस ख़ालिस मशीनी दुनिया में उन अंधी ताक़तों की क्रिया के बीच ज़िंदगी एक दुर्घटना या हादसे के रूप में इत्तिफ़ाक़ से आ पहुंची है। विश्व का एक बहुत ही छोटा अंश कुछ अर्से के लिए इत्तिफ़ाक़ी तौर पर सचेत या जीवनमय हो गया है। लेकन मौजूदा जानकारी के अनुसार विज्ञान अब इस बात पर एकमत है कि ज्ञान की धारा अब हमें एक ग़ैर-मशीनी सच्चाई (Non-Mechanical Reality) की तरफ़ ले जा रही है।"

इसी लेख में आगे चल कर उन्होंने लिखा है—

"आधुनिक जानकारी हमको मजबूर करती है कि हम अपने पिछले विचारों पर दोबारा नज़र डालें, जो हमने जल्दी में स्थापित कर लिए थे ; यानी यह कि हम संयोग से एक ऐसी विश्व में आ पड़े हैं, जिसका स्वयं ज़िंदगी से

कोई संबंध नहीं है या वह बाक़ायदा ज़िंदगी से वैर रखती है। अब हमने यह पाया है कि सृष्टि एक ऐसी निर्माण-शक्ति या नियंत्रण शक्ति (Desinging or Controling Power) का सबूत दे रही है, जो हमारे मानव-मस्तिष्क से बहुत कुछ मिलती जुलती है।"

(माडर्न सांइटिफ़िक थाट, पृष्ठ 104)

यह वैचारिक पहलू का एक उदाहरण था, अब व्यावहारिक पहलू लीजिए इस्लाम ने सामाजिक जीवन का जो क़ानून बनाया है, उसमें एक पुरुष को अधिकार कि वह चार औरतों तक से विवाह कर सकता है। इस्लाम के बाद जब पश्चि सभ्यता उभरी तो उसने इस क़ानून का बहुत मज़ाक उड़ाया और इसको अज्ञानता ज़माने का पाशविक क़ानून बताया। उसके अनुसार यह क़ानून औरतों के सा सरासर अन्याय था और इस बुनियाद पर कभी भी किसी प्रगतिशील समाज व इमारत खड़ी नहीं हो सकती थी। लिहाज़ा, ईसाई धर्म में हालांकि इसकी गुंजाइश लेकिन पश्चिमी सभ्यता ने उसे सिरे से ही हटा दिया और इसको एक निहायत बु और निन्दनीय कार्य ठहराया कि कोई व्यक्ति एक औरत रखते हुए दूसरी औरत शादी करे। इस विचार का प्रचार-प्रसार इतना अधिक हुआ कि अब यह हाल है कि कोई पुरुष इसका साहस कर सकता है और न कोई औरत अपने बारे में ऐसा सो सकती है कि वह किसी पुरुष की दूसरी या तीसरी पत्नी बने।

लेकिन परिस्थितियों ने—ख़ास तौर से दूसरे विश्वयुद्ध के हालात ने—अब य साबित कर दिया है कि एक से ज़्यादा शादियों की इजाज़त, वास्तव में, ए व्यावहारिक ज़रूरत है। कभी कुछ लोगों की ज़िंदगी में और कभी पूरे समाज लिए ऐसे असाधारण हालात पैदा हो जाते हैं कि दो में से किसी एक का चय अनिवार्य हो जाता है। या तो चरित्रहीनता या दुराचार को अपनाया जाए, जिसव अर्थ पूरी संस्कृति व समाज को एक भयावह ख़तरे में डाल देना है या बहुविवाह व स्वीकारा जाए, जिसमें समस्या भी हल हो जाती है और कोई ख़राबी भी पैदा न होती। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद उन सभी देशों में, जो युद्ध में शामिल हुए थे, य हालत हो गई थी कि औरतें जीवित रहीं और पुरुष बड़ी तादाद में मारे गए। पुरु की संख्या कम और स्त्रियों की संख्या बहुत ज़्यादा हो गई, जिसका असर अभी त बाक़ी है। 1955 ई० की जनगणना के अनुसार जापान में हर एक पुरुष के मुक़ाबले आठ औरतें थीं। इस महायुद्ध का सबसे ज़्यादा असर जर्मनी पर पड़ा, जहां बेशुम औरतें विधवा हो गईं और कितने ही बच्चे अनाथ हो गए और लड़कियों के लि पतियों का मिलना मुश्किल हो गया। इस वजह से उन देशों में लावारिस अ नाजायज़ बच्चों की संख्या बहुत बढ़ गई। जो अनाथ और यतीम हो गए थे, उन कोई वारिस नहीं रहा और जो औरतें पति से वंचित हो गई थीं, उन्होंने प्राकृति

तक़ाज़े से मजबूर हो कर अपनी कामेच्छा पूरी करने के लिए नाजायज़ तरीक़े अपनाना शुरू कर दिए। नौबत यहां तक आ पहुंची कि जर्मनी में कुछ औरतों के घरों पर इस किस्म का बोर्ड दिखाई देने लगा—

Wanted an Evening Guest

(रात गुज़ारने के लिए एक मेहमान चाहिए)

दूसरे विश्वयुद्ध में लड़ने वाले देशों के बेशुमार पुरुष मारे गए। नतीज़ा यह हुआ कि औरतें वैवाहिक जीवन से बेआस होकर वेश्या का जीवन बिताने लगीं। जेम्स एम० कैमरों (James M. Cameron) दूसरे विश्वयुद्ध में जर्मनी में पत्रकार थे। इस सिलसिले में उन्होंने अपने संस्मरण प्रकाशित किए हैं। यह ब्रिटिश पत्रकार अपने संस्मरण में लिखता है :

"युद्ध ख़त्म होने पर मैं बर्लिन गया तो यह टूटा-फूटा शहर भूखी वेश्याओं (Hungry Whores) से भरा हुआ था। मैंने इसको अपने ज़ेहन से निकालना चाहा पर न निकाल सका।"

इसके आगे वह लिखते हैं—

It is not so much that I have no stomach for the fight. I had no stomach for the victory.

"युद्ध को बर्दाश्त करने की ताक़त तो मुझमें थी पर इस जीत को बर्दाश्त करने की ताक़त मुझमें नहीं थीं।" (गार्जियन, 10 अक्तूबर 1982)

हालांकि पश्चिमी दिमाग़ ने अभी तक इस मामले में अपनी ग़लती स्वीकार नहीं की है, पर तथ्यों ने साफ़ तौर पर इसका ग़लत होना सिद्ध कर दिया है और वह दिन दूर नहीं, जब प्रत्यक्ष रूप से भी इसे स्वीकार कर लिया जायेगा। उस समय पता चलेगा कि शादी के मामले में जिस सिद्धांत को पश्चिम ने अपनाया था, उसका मतलब यह है कि समाज को कामाचार में फंसा कर असंख्य अपराधों का द्वार खोल दिया जाए। जबकि इस्लाम का सिद्धांत मूल समस्या को बेहतरीन तरीक़े से हल करता है और समाज को गंभीर नुक़सानों से बचाता है।

कुरआन की वैचारिकता और उसके नियमों की शाश्वतता की यह दो मिसालें थीं, जिनसे साफ़ ज़ाहिर हो रहा है कि आदमी के बनाए हुए सिद्धांत और क़ानून बन-बन कर बिगड़ते रहे, पर क़ुरआन ने पहले दिन जो कुछ कहा था, आख़िरी दिन तक उसकी सच्चाई में कोई फर्क नहीं आया। वह पहले जिस तरह सत्य था आज भी उसी तरह सत्य है। क़ुरआन की यह विशेषता ज़ाहिर करती है कि वह एक ऐसे ज़ेहन से निकला है, जिसका ज्ञान अतीत से भविष्य तक छाया हुआ है। क़ुरआन की शाश्वतता उसके ईश्वरीय होने का खुला सबूत है।

आख़िरी बात

हमारे अध्ययन ने अब हमारे लिए सच्चाई के दरवाज़े खोल दिए हैं। हम अपनी यात्रा इस सवाल से शुरू की थी कि "हम क्या हैं और यह विश्व क्या है ? इसका जवाब बहुत-से लोगों ने अपने ज़ेहन से देने की कोशिश की है। पर हम देखा कि ये जवाब सच्चाई को प्रतिबिम्बित नहीं करते। फिर हमारे कानों में अरब निकली हुई एक आवाज़ आई। हमने उस पर ध्यान दिया, उसको विश्व के फ्रेम रख कर देखा, मानव-इतिहास में उसे आज़माया और प्रकृति की गहराइयों में उ कर उसको पहचानने की कोशिश की। हमने देखा कि विश्व, इतिहास और मनुष्य मनोविज्ञान एकमत होकर इसकी पुष्टि कर रहे हैं। हमारा पूरा ज्ञान और हमारी तम उदात्त अनुभूतियाँ इसके पक्ष में हैं। जिस सच्चाई की हमें तलाश थी, उसको हमने लिया। अब हमें यह फ़ैसला करना है कि हम उसके साथ कैसा बर्ताव करते हैं।